वर्ष : ८
अंक : ५८

संत श्री आसारामजी आश्रम
द्वारा प्रकाशित

अक्तूबर :
१९९७

ऋषिप्रसाद

6/-

पूज्यश्री का आत्मसाक्षात्कार दिवस
३ अक्तूबर ९७
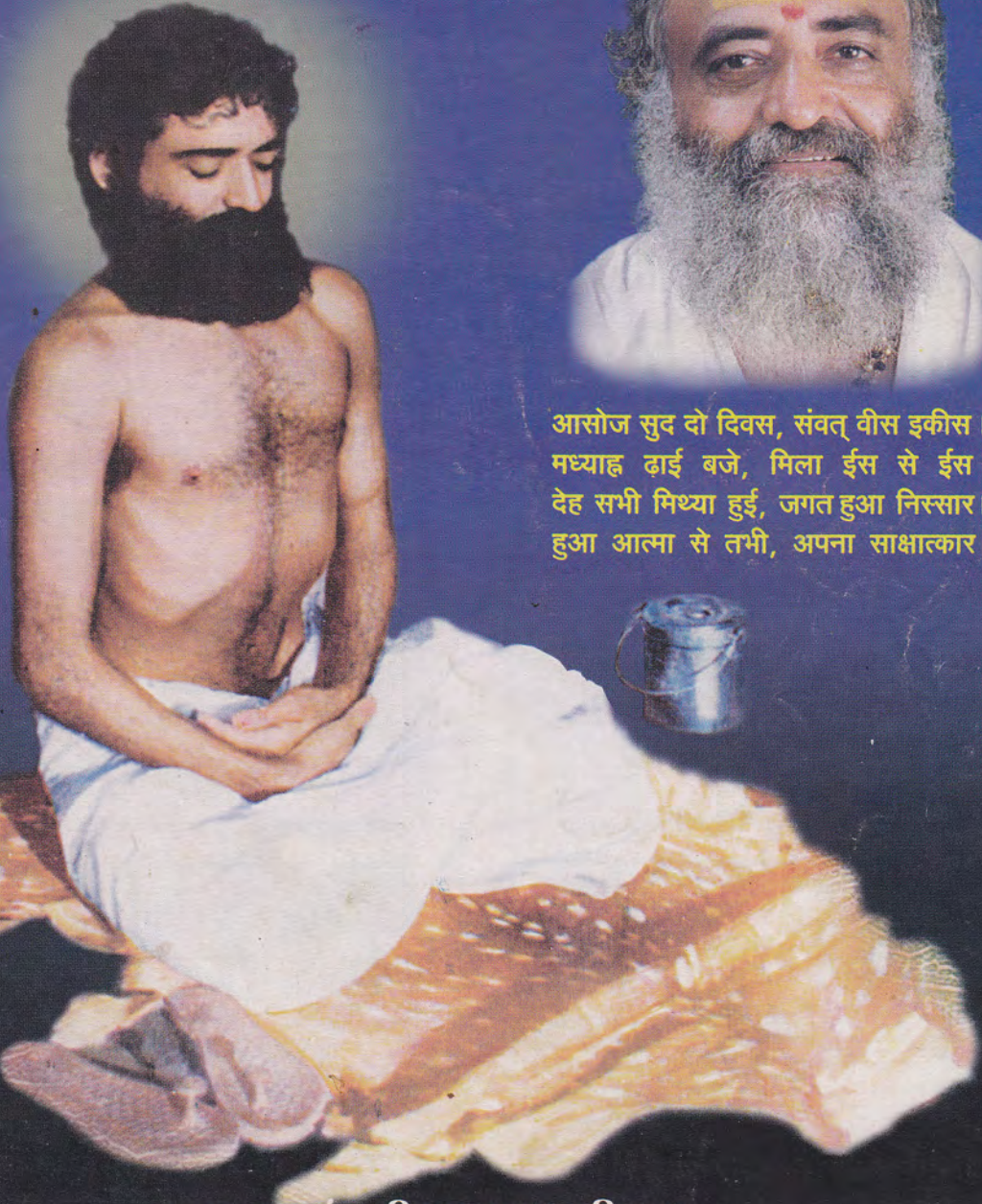
आसोज सुद दो दिवस, संवत् वीस इकीस।
मध्याह्न ढ़ाई बजे, मिला ईस से ईस॥
देह सभी मिथ्या हुई, जगत हुआ निस्सार।
हुआ आत्मा से तभी, अपना साक्षात्कार॥

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ८
अंक : ५८
९ अक्तूबर १९९७

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क
भारत, नेपाल व भूटान में
(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 30
(२) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८० ००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८० ००५ ने पारिजात प्रिन्टरी एवं भार्गवी प्रिन्टर्स, राणीप, अमदावाद में तथा पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

अमदावाद आश्रम के फोन नंबर बदल गये हैं। नये नंबर इस प्रकार हैं : (079) 7505010, 7505011.

प्रस्तुत है...

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग : ZEE टी.वी. चैनल पर रोज सुबह ७ से ७.३०. ATN चैनल पर रोज सुबह ७-३० से ८. YES चैनल पर रोज सुबह ८ से ८.३०.

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

शुभ दिवाली

आई शुभ दिवाली साधो, जगमग दीप जगाता चल ।
नूतन मंगलमय हो जीवन, आनंद रस छलकाता चल ॥
ज्ञान का दीप वैराग्य की बाती, त्याग का तेल मिलाता चल।
अखंड ज्योति परम स्नेह की, सत्य शील अपनाता चल।
लौ लागे निर्भय नाम की, अमृत रस बरसाता चल ।
प्रभुप्रीति भक्ति का उत्सव, उर आँगन में मनाता चल ॥
स्वास स्वास में हुई दिवाली, ज्ञान का जले चिराग जहाँ।
मस्त फकीरी आलम छाया, मैं तू का फिर भेद कहाँ।
राग द्वेष काफूर अहंतम, नारायणमय ये सारा जहाँ ।
लोभ मोह विषाद मिलाकर, दिव्य दृष्टि अपनाता चल ॥
मन मंदिर में हुआ महोत्सव, कीर्तन जप, प्रभुनाम का।
ध्यान की जगी शमा हृदय में , पिया जाम हरिनाम का।
छाई बेखुदी की मस्ती, निश्चल आनंद गुरुज्ञान का ।
पर्दा हटा दे भेद भरम का, साक्षी भाव जगाता चल ॥
हर दिल की धड़कन में बसी है छबि सुहानी श्याम की।
नूरे नजर में महक रही है,वही दिव्य चेतना राम की ।
जड़ जीव में वही है जलवा, वही मंजिल हर इन्सान की।
आनंदमय निज रूप है तेरा, आत्मज्योति जगाता चल ॥
ब्रह्मचिंतन से महका हृदय हो, हरिनाम की मधुर मिठास हो।
भक्ति मुक्ति और शक्ति का, हर दिल में अहसास हो।
उमंग उत्साह के फूल खिले हों दृढ़ता और विश्वास हो।
श्रद्धा और तत्परता से अपना सोया भाग्य जगाता चल ॥

- जानकी ए. चंदनानी 'साक्षी' (अमदावाद)

मनी आज अच्छी दिवाली हमारी

सभी इन्द्रियों में हुई रोशनी है ।
यथा वस्तु है सो तथा भासती है ।
विकारी जगत ब्रह्म है निर्विकारी ।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी ॥१॥
दिया दर्श ब्रह्मा जगत सृष्टि कर्त्ता।
भवानी सदा शंभु ओ विघ्न हर्त्ता।
महा विष्णु चिन्मूर्ति लक्ष्मी पधारी।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी ॥२॥
दिवाला सदा ही निकाला किया मैं।
जहाँ पे गया हारता ही रहा मैं ।
गये हार हैं आज शब्दादि ज्वारी ।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी ॥३॥
लगा दाँव पे नारी शब्दादि देते ।
कमाता हुआ द्रव्य थे जीत लेते ।
मुझे जीत के वे बनाते भिकारी ।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी ॥४॥
गुरु का दिया मंत्र मैं आज पाया ।
उसी मंत्र से ज्वारियों को हराया।
लगा दाँव वैराग्य ली जीत नारी ।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी ॥५॥
सलोनी, सुहानी, रसीली मिठाई ।
वशिष्ठादि हलवाइयों की है बनाई।
उसे खाय तृष्णा दुराशा निवारी ।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी ॥६॥
हुई तृप्ति, संतुष्टता, पुष्टता भी।
मिटी तुच्छता, दुःखिता, दीनता भी।
मिटे ताप तीनों हुआ मैं सुखारी ।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी ॥७॥
करे वास भोला ! जहाँ ब्रह्मविद्या।
वहाँ आ सके ना अंधेरी अविद्या ।
मनावें सभी नित्य ऐसी दिवाली ।
मनी आज अच्छी दिवाली हमारी ॥८॥

- भोले बाबा

दीपावली पर देता हूँ एक अनूठा आशीर्वाद

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

सुथरा नाम के एक फकीर थे । वे अपनी स्पष्टवादिता के लिए प्रसिद्ध थे। वे किसी मठ में पधारे।

उस मठ में एक बार एक वर-कन्या आये प्रणाम करने के लिए तो मठाधीश ने कहा :

''जुग-जुग जियो, युवराज !''

उसकी पत्नी से भी कहा : ''जुग-जुग जियो, बेटी !''

वर के माता-पिता ने प्रणाम किया तो उन्हें भी कहा : ''जुग-जुग जियो।''

उन्होंने दक्षिणा वगैरह रखकर प्रसाद लिया। तब मठाधीश ने कहा : ''यहाँ सुथरा नाम के उच्च कोटि के संत पधारे हैं। जाओ, उनके भी दर्शन कर लो।''

वे लोग पहुँचे फकीर सुथरा के पास और वर ने प्रणाम किया। सुथरा फकीर : ''बेटा! तू मर जायेगा।''

कन्या ने प्रणाम किया तब बोले : ''दुल्हन ! तू मर जायेगी।''

माता-पिता के प्रणाम करने पर भी सुथरा फकीर बोले : ''तुम लोग तो जल्दी मरोगे।''

यह सुनकर वर के पिता बोल उठे : ''महाराज ! उन मठाधीश ने तो हमें आशीर्वाद दिये हैं कि 'जुग-जुग जियो' और आप कहते हैं कि 'जल्दी मर जाओगे।' ऐसा क्यों महाराज ?''

सुथरा फकीर : ''झूठ बोलने का धंधा हमने उन मठाधीशों और पुजारियों को सौंप दिया है । पटाने और दुकानदारी चलाने का धंधा हमने उनके हवाले कर दिया है। हम तो सच्चा आशीर्वाद देते हैं। दुल्हन से हमने कहा कि 'बेटी ! तू मर जायेगी।' इसलिए कहा कि वह सावधान हो जाये और मरने से पहले अमरता की ओर चार कदम चल पड़े तो उसका प्रणाम करना सफल हो जायेगा।

दुल्हे से भी हमने कहा कि 'बेटा ! तू मर जायेगा' ताकि उसको याद आये मौत की और वह भी अमरता की ओर चल पड़े। तुम दोनों को भी वही आशीर्वाद इसीलिए दिया कि तुम भी नश्वर जगत के मायिक संबंधों से अलग होकर शाश्वत् की तरफ चल पड़ो।''

सुथरा फकीर ने जो आशीर्वाद दिया था, वही आशीर्वाद इस दीपावली के अवसर पर मैं आपको देता हूँ कि 'मर जाओगे...'

ऐसा आशीर्वाद आपको गुजरात में कहीं नहीं मिलेगा, हिन्दुस्तान में भी नहीं मिलेगा और मुझे तो यहाँ तक कहने में संकोच नहीं होता कि पूरी दुनिया में ऐसे आशीर्वाद कहीं नहीं मिलेंगे । यह आशीर्वाद इसीलिए देता हूँ कि जब मौत याद आयेगी तो ज्ञान-वैराग्य पनपेगा और जहाँ ज्ञान-वैराग्य है वहाँ संसार की चीजें तो दासी की नाईं आती हैं, बाबा !

मैं तुम्हें 'धन-धान्य, पुत्र-परिवार बढ़ता रहे, आप सुखी रहें...' ऐसे छोटे-छोटे आशीर्वाद क्या दूँ ? मैं तो 'होलसेल' में आशीर्वाद दे देता हूँ ताकि तुम भी अध्यात्म के मार्ग पर चलकर अमरत्व का आस्वाद कर सको।

किसी शिष्य ने अपने गुरु से विनंती की :

''गुरुदेव ! मुझे शादी करनी है किन्तु कुछ जम नहीं रहा है। आप कृपा कीजिए।''

गुरुजी बोले : ''ले यह मंत्र और जब देवता आयें तब उनसे वरदान माँग लेना लेकिन ऐसा माँगना कि तुझे फिर दुःखी न होना पड़े। तू शादी करे किन्तु बेटा न हो तो भी दुःख, बेटा हो और धन-संपत्ति न हो तब भी दुःख और बेटे की शादी नहीं होगी तब भी दुःख, बेटे को सुकन्या न मिली तब भी दुःख । इसलिए मैं ऐसी

(शेष पृष्ठ १३ पर)

गीता में प्रपत्तियोग

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् ।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ।।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : 'हे अर्जुन ! मेरे में आविष्ट चित्तवाले उन भक्तों का मैं मृत्युरूप संसार-समुद्र से शीघ्र ही उद्धार करनेवाला बन जाता हूँ।'

(गीता : १२.७)

संसार एक सागर है। जैसे सागर में जल-ही-जल है ऐसे ही संसार में मृत्यु-ही-मृत्यु है। जो पैदा होता है, मृत्यु की ओर उसकी यात्रा शुरू हो जाती है। जो संयोग है वह वियोग में बदल जाता है। जो संग्रह है वह विनाश में बदल जाता है।

ऐसा कोई शरीर नहीं कि जिसके साथ मृत्यु न जुड़ी हो। ऐसा कोई संयोग नहीं जिसके साथ वियोग न जुड़ा हो। ऐसा कोई संग्रह या भोग नहीं जिसका विनाश या वियोग न होता हो।

ऐसा कोई शरीर नहीं कि जिसके साथ मृत्यु न जुड़ी हो। ऐसा कोई संयोग नहीं जिसके साथ वियोग न जुड़ा हो। ऐसा कोई संग्रह या भोग नहीं जिसका विनाश या वियोग न होता हो।

संसार माने :- **संसरति इति संसारः**। जो सरकता जाय उसे संसार कहते हैं। सिक्ख धर्म के आदिगुरु गुरु नानकदेव ने कहा है :

राम गयो रावण गयो ताको बहु परिवार ।
कह नानक कछु थिर नहीं सपने ज्यों संसार ।।

शिवजी ने भी कहा है :

उमा कहऊँ मैं अनुभव अपना।
सत्य हरि भजन जगत सब सपना ।।

जहाँ खूब दूध होता है उसे दुग्धालय बोलते हैं। जहाँ पुस्तकें होती हैं उसे पुस्तकालय बोलते हैं। जहाँ औषधियाँ होती हैं उसे औषधालय बोलते हैं। ऐसे ही जहाँ दुःख-ही-दुःख है उस संसार को दुःखालय कहा गया है। यह दुःखालय तो है ही, साथ ही विनाशशील भी है।

फिर भी ऐसे दुःखालय और विनाशशील संसार में भी एक सुखस्वरूप भगवान का अनुभव किया जा सकता है। मरणधर्मा शरीर में अमर ईश्वर का एहसास हो सकता है। नश्वर में शाश्वत् की मुलाकात करने की संभावनाएँ छुपी हैं। इसलिए मनुष्य जीवन सबसे श्रेष्ठ और दुर्लभ माना जाता है।

संसार की ऐसी कोई वस्तु नहीं, ऐसी कोई परिस्थिति नहीं, ऐसी घटना नहीं, ऐसा कोई संयोग नहीं, ऐसा कोई संबंध नहीं, जो सदा रहे। सब नाश की तरफ जा रहे हैं।

खून पसीना बहाता जा
तान के चादर सोता जा।
यह किश्ती तो हिलती जायेगी
तू हँसता जा या रोता जा ।।

कितना भी इसको थामने का प्रयास करो किन्तु संसार की चीजें और संसार कभी थमा नहीं है। वह बदलता रहता है।

चाँद सफर में, सितारे सफर में।
दरिया सफर में, दरिया के किनारे सफर में ।।

जहाँ बस्तियाँ थीं, वे बस्तियाँ सागर में कहाँ खो गयीं ? पता तक नहीं है। जहाँ समुद्र लहराता था वहाँ सड़कें बन गयीं और गाड़ियाँ दौड़ रही हैं। जहाँ पानी उछलकूद करता था, वहाँ तो दस-दस मंजिली इमारतें दिखाई देती हैं और जहाँ मकान थे वे पूरे-के-पूरे गायब हो गये दरिया में। मोहन-जो-दड़ो केवल एक ही नहीं है, सारी दुनिया मोहन-जो-दड़ो की तरह

हो जाती है समय पाकर।

देखत नैन चल्यो जग जाई ।
का माँगूँ कछु थिर न रहाई ॥

देखते-देखते इस संसार की परिस्थितियाँ चली जा रही हैं, क्या माँगूँ ?

अनित्यानि शरीराणि वैभवो नैव शाश्वतः ।
नित्यं सन्निहितो मृत्युः कर्तव्यो धर्मसंग्रहः ॥

शरीर अनित्य है । वैभव शाश्वत् नहीं है और हम रोज मृत्यु की तरफ जा रहे हैं। अतः हमारा कर्त्तव्य यह है कि धर्म का संग्रह कर लें और धर्म का संग्रह करनेवाले पुरुष के लिए भगवान वचन देते हैं :

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्यु संसारसागरात् ।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥

हे अर्जुन ! जैसे धनवान व्यक्ति की पत्नी अगर भीख माँगे तो उस धनबान व्यक्ति की इज्जत का सवाल है। ऐसे ही मेरा भक्त संसार के सागर में बार-बार गोते खाये और जन्मे-मरे तो मेरी इज्जत का सवाल है । जो मेरा होकर मेरा भजन करता है, उसे पार होने की चिंता नहीं करनी चाहिए। जो मेरा होकर मेरा भजन करता है उसे भोजन, छाजन, नीर की भी चिंता नहीं करनी चाहिए । उसे कभी उदास या चिंतित नहीं होना चाहिए और कभी संदेह नहीं करना चाहिए। जैसे पतिव्रता स्त्री कभी यह नहीं सोचती कि 'पति मेरा भरण-पोषण करेगा कि नहीं ? मुझे सुख देगा कि नहीं ?' ऐसे ही दृढ़ भक्त जब मेरे होकर भजन करते हैं फिर वे कोई संशय या संदेह नहीं करते।

संशय सबको खात है संशय सबका पीर ।
संशय की फाँकी करे उसका नाम फकीर ॥

भिखमंगे का नाम फकीर नहीं हैं वरन् जिसने संशय की फाँकी कर ली उसका नाम है फकीर। भगवान हमारा भजन सुनते होंगे कि नहीं, भजन फलता होगा कि नहीं, यह संशय मत आने दो । 'हमारा क्या होगा ?' अरे !

भोजन छाजन नीर की चिंता करे सो मूढ़ ।
भक्त चिंता ना करे निज पद में आरूढ़ ॥
निज पद में आरूढ़ चिंता करे सो कैसी ?
खुशी है ता में प्राप्त अवस्था जैसी ॥

किसीने कहा है :

गम की अँधेरी रात में,
दिल को न बेकरार कर ।
सुबह जरूर जायेगी,
सुबह का इंतजार कर ॥

...और तेरा परमेश्वर ही तो तेरी सुबह है भैया ! उस परमेश्वर की प्रेरणा ही तो तेरी सुबह है। शरीर की सुबह तो रोज आती है फिर अंधकारमयी रात्रि आ जाती है लेकिन परमेश्वररूपी सुबह, परमेश्वररूपी प्रकाश यदि एक बार भी हृदय में आ जाता है तो फिर रात्रि का सवाल ही नहीं रहता।

दुःखालय और विनाशशील संसार में भी एक सुखस्वरूप भगवान का अनुभव किया जा सकता है । मरणधर्मा शरीर में अमर ईश्वर का एहसास हो सकता है। नश्वर में शाश्वत् की मुलाकात करने की संभावनाएँ छुपी हैं।

भगवान कहते हैं : 'जो मेरे को अपना निकटवर्ती और नित्य-शुद्ध-बुद्ध-चैतन्यस्वरूप जानते-मानते हैं और मेरा भजन करते हैं, अपना चित्त मुझ चैतन्य में लगाते हैं, उन्हें संसार-सागर से तरने की चिंता नहीं करनी चाहिए।

मृत्यु के समय तो शरीर रोग के प्रभाव से पीड़ित हो जाता है। मृत्यु के समय जीव मेरा चिंतन करे और मैं उसे तार दूँ ऐसी बात नहीं है, अर्जुन ! फिर उनकी जीवनभर की भक्ति का क्या होगा ? केवल मृत्यु के समय मेरा भजन करे और तभी मैं उन्हें तारूँ तो फिर मेरे में और दुकानदार में क्या फर्क ? जो सचमुच में एक बार भी मेरी शरण आ जाता है, मैं उसे नहीं छोड़ता।

सचमुच में हम ईश्वर की शरण हैं लेकिन मानते नहीं हैं और राग-द्वेष की शरण में चले जाते हैं। लोभ-लालच की शरण में चले जाते हैं। हाड़-मांस के शरीर

की शरण में चले जाते हैं। किन्तु इन चीजों की कितनी भी शरण लो, वे शरण देती नहीं कमबख्त ! वरन् थप्पड़ें ही मारती हैं जबकि एकबार सच्चे हृदय से परमात्मा की ली गयी शरण भवसागर से तारती है।

"जैसे पतिव्रता स्त्री कभी यह नहीं सोचती कि 'पति मेरा भरण-पोषण करेगा कि नहीं' ऐसे ही दृढ़ भक्त जब मेरे होकर भजन करते हैं फिर वे कोई संशय या संदेह नहीं करते।"

कुछ समय पहले वैज्ञानिकों ने एक प्रयोग किया : एक मुर्गी ने अण्डा सेया। सेते-सेते जब दिन पूरे हो गये तब एक अण्डे को चोंच मारी तो चूजा बाहर निकल आया। जब दूसरे अण्डे पर चोंच मारी तो ज्यों-ही चूजे का मुँह बाहर आये उससे पहले मुर्गी को उठाकर बतख को रख दिया। चूजे की पहली नजर बतख पर पड़ी तो वह बतख को ही अपनी माँ समझने लगा और उसके पीछे-पीछे जाने लगा। बतख चोंचें मार रही थी और उसकी असली माँ (मुर्गी) चिल्ला भी रही थी अपने पास बुलाने के लिए किन्तु चूजा बतख के पीछे ही लगा रहा।

"जो मेरे को अपना निकटवर्ती और नित्य-शुद्ध-बुद्ध-चैतन्य-स्वरूप जानते-मानते हैं और मेरा भजन करते हैं, अपना चित्त मुझ चैतन्य में लगाते हैं, उन्हें संसार-सागर से तरने की चिंता नहीं करनी चाहिए।"

ऐसे ही वास्तव में हम परमात्मा के बच्चे हैं।

परमात्मा ज्ञानस्वरूप है तो हमारी आत्मा भी ज्ञानस्वरूप है। परमात्मा सुखस्वरूप है तो हमारी आत्मा भी सुखस्वरूप है। परमात्मा नित्य है तो हमारी आत्मा भी नित्य है, किन्तु हम मायारूपी बतख के प्रभाव में आ गये हैं। उसकी कई चोंचें भी लगती हैं। कभी काम की चोंच तो कभी क्रोध की, कभी लोभ की तो कभी मोह की, कभी अहंकार की भी चोंच लगती है और अंत में तो बड़ी चोंच लगती है मृत्यु की। ऐसे ही सदियों से चोंचें खाता आया है यह जीव किन्तु अगर इस मनुष्य जन्म में उसे सत्संग मिल जाये और असली माँरूपी परमात्मा ही हमारा सच्चा विश्रांति स्थल है यह समझ में आ जाये तो उद्धार हो जाये।

सचमुच में हम ईश्वर की शरण हैं लेकिन मानते नहीं हैं और राग-द्वेष की, लोभ-लालच की, हाड़-मांस के शरीर की शरण में चले जाते हैं।

वास्तव में तो आपका और ईश्वर का ऐसा पक्का संबंध है कि आप तोड़ना चाहें तो भी नहीं तोड़ सकते और अगर ईश्वर खुद भी तुम्हारे साथ संबंध तोड़ना चाहे तो भी नहीं तोड़ सकता। इतना हमारा और ईश्वर का अविभाज्य संबंध है, शाश्वत् संबंध है लेकिन अज्ञानता के कारण हम कल्पित संबंधों को सच्चा मानते हैं और सच्चे संबंध को पीठ दिये हुए हैं।

आपका और इस शरीर का संबंध ६०-७० साल पहले नहीं था, बाद में नहीं रहेगा और अभी-भी नहीं की तरफ ही जा रहा है। सेठ का और रूपयों का संबंध पहले नहीं था, बाद में नहीं रहेगा। पिता और पुत्र का संबंध भी पुत्र के जन्म से पहले नहीं था और मरने के बाद भी नहीं रहेगा। लेकिन परमात्मा के साथ इस जीवात्मा का संबंध तो जन्म के पहले भी था, जन्म ले रहा था तब भी उस चैतन्य के साथ संबंध था, बाल्यावस्था में भी था, किशोरावस्था में भी था। किशोरावस्था चली गयी फिर भी ईश्वर के साथ तुम्हारा संबंध नहीं गया। यौवन चला गया फिर भी परमात्मा के साथ का संबंध नहीं गया। बुढ़ापा चला जाये और मौत आ जाये फिर भी परमात्मा के साथ जीवात्मा का संबंध नहीं टूट सकता है। अरे ! जीवात्मा और परमात्मा का संबंध तो मृत्यु के बाद भी नहीं टूट सकता।

जैसे महाकाश के साथ घटाकाश का संबंध नहीं टूट सकता है। महाकाश संबंध तोड़ना चाहे फिर भी नहीं तोड़

सकता और घड़ा संबंध तोड़ना चाहे फिर भी महाकाश से संबंध नहीं तोड़ सकता। जैसे लहर पानी से संबंध तोड़ना चाहे तो नहीं तोड़ सकती और पानी लहर से संबंध तोड़ना चाहे तो नहीं तोड़ सकता है ऐसे ही ईश्वर और जीव का संबंध नहीं टूट सकता है क्योंकि वह सनातन संबंध है।

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥

'हम ईश्वर के हैं, इस बात में तो जरा भी संदेह नहीं करना चाहिए। फिर वह जो भी करे। 'मान दिलाता है तो तेरी मौज... अपमान दिलाता है तो तेरी मौज... अगर नरक में भेजे तो हम तेरे होकर ही नरक में भी जायेंगे।' अगर ईश्वर के होकर नरक में गये तो नरक के बाप की भी ताकत नहीं कि दुःख दे सके। किन्तु अगर भोगों के होकर स्वर्ग में भी गये तो वह स्वर्ग सुखदायी नहीं वरन् दुःखदायी ही होगा।

अपनी निष्ठा उस परमेश्वर में रखो और परमेश्वर को अपना मानकर तथा अपने को परमेश्वर का मानकर कार्य करो। भजन करो, जो भी निर्णय लो, परमेश्वर के होकर लोगे तो वह अंतर्यामी परमेश्वर जरूर तुम्हारे हृदय में शुभ प्रेरणा करेगा।

ईशावास्य उपनिषद् में आता है : **तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः ।** यह सारा जगत ईश्वररूप है, इसे त्याग से भोगो, पकड़ो मत। जगत की बातों को, जगत की परिस्थिति को अपने भीतर गहरा मत उतारो। अपने में अगर उतारना ही है तो जो अपना-आपा है, उसके ही प्रेम को अपने में उतारो तो वही रूप हो जाओगे।

सच पूछो तो केवल परमात्मा ही अपना है। नानकजी ने कहा है :

संगी साथी चल गये सारे कोई न निभियो साथ।
कह नानक इह बिपत में टेक एक रघुनाथ ॥

इस शरीर को 'मैं' मानकर और वस्तुओं को 'मेरी' मानकर जो सुखी होना चाहता है उसके भाग्य में दुःख ही दुःख है। इस शरीर को 'मैं' मानकर, वस्तुओं को और संबंधों को सँभाल-सँभालकर जो सुख ढूँढ़ता है उसे 'V.I.P. Quota' का मूर्ख माना जाता है। श्रीकृष्ण ने ऐसे लोगों को गिनकर १०८ गालियाँ दी हैं। वह भी कृपा करके दीं हैं।

जैसे बेटा अंगारे के पास जाता है तो माँ उसे डाँटती है, मारती है। इसमें माँ का द्वेष नहीं है वरन् यह भी माँ की कृपा ही है। ऐसे ही माताओं की माता और पिताओं के पिता जो भगवान श्रीकृष्ण हैं उन्होंने गीता में १०८ गालियाँ दी हैं ताकि लोग मूर्खता छोड़ें। **विमूढा नानुपश्यन्ति। नराधमाः। आसुरंभावमाश्रिताः।**

इस प्रकार की १०८ गालियाँ उन्हें दी हैं जो आसक्त होकर मिथ्या संसार में सच्चा सुख ढूँढ़ना चाहते हैं ताकि वे सावधान हो जायें।

अपनी निष्ठा उस परमेश्वर में रखो और परमेश्वर को अपना मानकर तथा अपने को परमेश्वर का मानकर कार्य करो। भजन करो, जो भी निर्णय लो, परमेश्वर के होकर लोगे तो वह अंतर्यामी परमेश्वर जरूर तुम्हारे हृदय में शुभ प्रेरणा करेगा और तुम सफल हो सकोगे।

जिसने उस परमेश्वर को तत्त्व से जान लिया उसके लिए कर्त्तव्य शेष नहीं रह जाता। **तस्य कार्यं न विद्यते।** वह वही रूप हो जाता है और वास्तव में देखा जाय तो तुम भी वही हो। जैसे पानी में छोटे-बड़े बुलबुले होते हैं किन्तु तत्त्व से तो सारे बुलबुले पानी हैं, वैसे ही तत्त्व से हम सब भगवान के हैं और भगवान हमारे हैं। इस बात को अगर एक बार भी ठीक से समझ लिया तो फिर संसार-सागर से पार होना आसान हो जायेगा।

गुरु बिल्कुल हिचकिचाहट से रहित, निःशेष एवं सम्पूर्ण आत्मसमर्पण के सिवाय और कुछ नहीं चाहते। जैसे प्रायः आज कल के शिष्य करते हैं वैसे आत्मसमर्पण केवल शब्दों की बात ही नहीं होना चाहिए।
- स्वामी शिवानंदजी

ईश्वर प्राप्ति इसी जन्म में संभव है...

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

कई लोगों को होता है कि 'हम सियाराम-सियाराम... हरि ॐ - हरि ॐ...' करते हैं, शिविर भरते हैं, शराब-कबाब छोड़ दिया है फिर भी भगवान नहीं मिलते हैं। क्यों ?'

जो चीज अधिक आसान होती है, आसानी से मिलती है उसका लाभ भी तुच्छ होता है, छोटा होता है। जिस मौसम में जो सब्जी या फल ज्यादा होते हैं उसकी कीमत भी कम होती है।

संसार की चीजों को पाने का आपने यत्न किया और वे नहीं मिलीं तो आपका यत्न व्यर्थ गया किन्तु ईश्वर को पाने का यत्न किया और ईश्वर इस जन्म में नहीं मिले तो भी वह यत्न व्यर्थ नहीं जाता।

जीवन में सोना इतना काम नहीं आता जितना कि लोहा। भोजन बनाने में, औजार बनाने में, मकान आदि बनाने में लोहा जितना उपयोगी है उतना उपयोग सोने का नहीं है। लेकिन कम मात्रा में मिलने के कारण महँगा सोना खरीदा भी जाता है और बड़े यत्न से रखा भी जाता है।

आध्यात्मिक सफलता ऊँची चीज है। वह अनायास और जल्दी नहीं मिलती है। ऊँची चीजों के लिए ऊँचा प्रयत्न करना पड़ता है।

लखपति के लिए २५-५० या १००-२०० रूपये की कोई कीमत नहीं किन्तु गरीब व्यक्ति के लिए तो १-२ रूपये भी कीमती हैं।

जिनके यहाँ साल-दो साल में बालक आ जाते हैं उन्हें बालक मुसीबत-से लगते हैं जबकि जिनके यहाँ १५-२० साल बाद बालक का जन्म होता है तो उन्हें लगता है कि मानो, साक्षात् देवता ही आ गये हों।

इसी प्रकार अगर वह परब्रह्म-परमात्मा यदि आसानी से मिल जाता तो उसका आनंद, उसका माधुर्य नहीं ले पाते लेकिन बहुत यत्न करते-करते जब मिलता है तो खूब आनंद-माधुर्य छलकता है।

यहाँ दूसरा प्रश्न उठ सकता है कि 'फिर भी सबको तो भगवान नहीं मिलते। क्यों ?'

हाँ, यह बात सही है लेकिन सबको न मिलने का कारण होता है। एक होती है इच्छा और दूसरी होती है आकांक्षा। इच्छा केवल दिमाग को घुमाती है जबकि आकांक्षा मन-बुद्धि को उसमें सक्रिय भी करती है। लदुर्बल इच्छा या दुर्बल आकांक्षावाला व्यक्ति ईश्वर की प्राप्ति तक की यात्रा नहीं कर पाता है।

अच्छा, यह बात भी स्वीकार कर ली तो पुनः एक प्रश्न उठ सकता है कि 'इच्छा बढ़कर आकांक्षा बनती है और आकांक्षा जब तीव्र होती है तब जीव ईश्वर को पाता है। यह बात भी ठीक है परंतु जिसकी दुर्बल इच्छा-आकांक्षा है तो वह यदि ईश्वर के रास्ते चला और ईश्वर नहीं मिला तो फिर उसकी इतनी मेहनत का क्या लाभ ? संसार के आकर्षणों के त्याग का क्या लाभ ?

इसका उत्तर है कि संसार की चीजों को पाने का आपने यत्न किया और वे नहीं मिलीं तो आपका यत्न व्यर्थ गया किन्तु ईश्वर को पाने का यत्न किया और ईश्वर इस जन्म में नहीं मिले तो भी वह यत्न व्यर्थ नहीं जाता।

संसार की चीजें जड़ हैं, उन्हें पता नहीं कि 'आप उनको पाना चाहते हैं'। अतः अगर आपको वे चीजें नहीं मिलतीं, तब भी आपकी दुर्बल इच्छा-आकांक्षाओं को सबल बनाने की ताकत उन जड़ वस्तुओं में नहीं है जबकि आपकी आरंभिक दुर्बल

इच्छा-आकांक्षा को देखकर अंतर्यामी परमात्मा सोचता है कि **'निर्बल के बल राम... ।'** देर-सबेर, इस जन्म में नहीं तो दूसरे जन्म में, इस जन्म की की गयी इच्छा-आकांक्षा को, इस जन्म की साधना को पुष्ट बनाकर वह प्रियतम परमात्मा स्वयं ही मिल जाता है।

इस जन्म का वकील, डॉक्टर दूसरे जन्म में पुनः वकील, डॉक्टर बनना चाहे तो जरूरी नहीं कि बन ही जाये और अगर बने भी तो उसे आरंभ तो क, ख, ग, घ... A, B, C, D...आदि से ही करना पड़ेगा। लेकिन इस जन्म का अगर कोई भक्त है तो दूसरे जन्म में उसे फिर से भक्ति की A, B, C, D करने की जरूरत नहीं है वरन् जहाँ से भक्ति छूटी है, वहीं से शुरू हो जायेगी।

शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते ॥
अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम् ॥

'योगभ्रष्ट पुरुष शुद्ध आचरणवाले श्रीमान् पुरुषों के घर में जन्म लेता है अथवा ज्ञानवान योगियों के ही कुल में जन्म लेता है।'

(गीता : ६.४१,४२)

आध्यात्मिक सफलता ऊँची चीज है। वह अनायास और जल्दी नहीं मिलती है वरन् ऊँची चीजों के लिए ऊँचा प्रयत्न करना पड़ता है और ऊँची चीजों की महत्ता को स्वीकारना पड़ता है। अमर तत्त्व की प्राप्ति, परमात्मा की प्राप्ति की तीव्र इच्छा कोई मजाक नहीं है। उसमें खूब विवेक चाहिए।

जिसकी ईश्वरप्राप्ति की आकांक्षा खूब तीव्र होती है, वह इसी जन्म में ईश्वर को पा लेता है और आकांक्षा अगर तीव्र नहीं है तो कालान्तर में वह तीव्र बनती है और वह ईश्वर को पा लेता है। किन्तु कालान्तर में तीव्र बने, इसका इंतजार क्यों करो ? बल्कि अभी तीव्र बना लो। जैसे शहद के छत्ते में एक रानी मधुमक्खी होती है। रानी मधुमक्खी जहाँ जाती है वहाँ बाकी की सारी मधुमक्खियाँ उसीका अनुसरण करती हैं। ऐसे ही आपके जीवन में ईश्वरप्राप्ति की इच्छा को रानी बना दो, मुख्य बना दो तो जो कई जन्मों के बाद मिल सकता है वह अमर तत्त्व, वह अमर पद आप इसी जन्म में पा सकते हैं। केवल अपनी आकांक्षा को तीव्र कर दो, बस।

कई लोग व्यवहार में विफल होते हैं तो कहते हैं : 'भाई ! मैंने धंधा तो किया किन्तु चला नहीं क्योंकि संघर्ष बहुत था... यह काम तो किया लेकिन क्या करें ? भाग्य ही ऐसा था... पिता-भाई-भागीदार ने साथ नहीं दिया...' वगैरह-वगैरह। सच बात तो यह है कि उनकी आकांक्षा की तीव्रता नहीं होती इसलिए वे विफल होते हैं और दोष देते हैं व्यक्ति, वस्तु या परिस्थिति को।

विफलता का मुख्य कारण यही है कि आकांक्षारूपी रानी मधुमक्खी के अभाव में साधारण मधुमक्खी बैठा देते हैं और दोष परिस्थितियों को देते हैं। 'भाई ! इसने धोखा दे दिया... उसने ऐसा कर दिया...' जबकि किसीकी आकांक्षा तीव्र होती है तो वह कार्य को पूरा करके ही छोड़ता है और उस कार्य में सफल भी होता है।

जैसे, सांसारिक कार्यों में भी व्यक्ति दुर्बल

जिसकी ईश्वरप्राप्ति की आकांक्षा खूब तीव्र होती है, वह इसी जन्म में ईश्वर को पा लेता है और आकांक्षा अगर तीव्र नहीं है तो कालान्तर में वह तीव्र बनती है और वह ईश्वर को पा लेता है।

सांसारिक कार्यों में व्यक्ति दुर्बल इच्छा-आकांक्षा व असावधानी के कारण विफल होता है। ठीक वैसा ही ईश्वरप्राप्ति का कार्य है।

रोज सुबह उठकर संकल्प करें : 'मैं अमर तत्त्व को पाऊँगा जिसे पाने के बाद और कुछ पाना शेष नहीं रहता।' सूर्योदय और सूर्यास्त के वक्त का उपयोग उपासना में करो। चूको नहीं। ऐसा करनेवाले व्यक्ति की धृति, मेधा और प्रज्ञा बढ़ती है।

इच्छा-आकांक्षा व असावधानी के कारण विफल होता है, ठीक वैसा ही ईश्वरप्राप्ति का कार्य है। यदि व्यक्ति की ईश्वरप्राप्ति की आकांक्षा तीव्र नहीं होती तो उसका ईश्वरप्राप्ति का लक्ष्य भी सिद्ध नहीं होता। अतः व्यक्ति को चाहिए कि आकांक्षा को तीव्र बनाये।

यश तो उन्हीं का स्थायी होता है जो तीव्र प्रयास करके, ऊँचा प्रयास करके ऊँचे में ऊँची चीज आत्मदेव को पा लेता है।

आकांक्षा को तीव्र कैसे बनाया जाय ? रोज सुबह उठकर संकल्प करें : "मैं अमर तत्त्व को पाऊँगा। जिसे पाने के बाद और कुछ पाना शेष नहीं रहता, जिसे जानने के बाद और कुछ जानना शेष नहीं रहता और जिसमें स्थिर रहने के बाद बड़े भारी दुःख से भी आदमी विचलित नहीं होता, जिसमें स्थिर होने के बाद इन्द्र का पद भी तुच्छ लगता है उसीमें मैं स्थिर रहूँगा...।" इस संकल्प को रोज जोर से दुहराएँ। सूर्योदय और संध्या के वक्त का फायदा लें, उपासना करें। महाभारत में यह लिखा है कि ऐसा करनेवाले व्यक्ति की धृति, मेधा और प्रज्ञा बढ़ती है।

किसी शत्रु को ठीक करने में कहीं आपका ईश्वर न छूट जाये। किसी मित्र को रिझाने में कहीं आपका ईश्वरप्राप्ति का लक्ष्य न छूट जाये। किसी सुविधा को पाने में कहीं आप अपने लक्ष्य से च्युत न हो जायें। कोई असुविधा आपकी ईश्वरप्राप्ति की उमंग को न छुड़वा दे। ऐसी सतर्कता रखनी चाहिए।

अतः सूर्योदय और सूर्यास्त के वक्त का उपयोग उपासना में करो। चूको नहीं।

दृढ़तापूर्वक इस छोटे-से नियम को पालो। तमाम व्यावहारिक बिडंबनाएँ मिटाने का सामर्थ्य और ईश्वरप्राप्ति का रास्ता तय करने में भी इससे आसानी होगी। हिम्मत करो।

आलस कबहुँ न कीजिए आलस अरि सम जानि।
आलस से विद्या घटे बल-बुद्धि की हानि॥

"नहीं आनंद ! नहीं। सब मुझे सुनने के लिए नहीं आते बल्कि अपने को ही सुनने के लिए आते हैं और जो जैसा है वैसा ही सुनता है।"

रात को जल्दी सो जाओ, रात्रि का भोजन जल्दी कर लो। सुबह जल्दी उठो और इस संकल्प को आत्मसात् कर लो तो अमर तत्त्व पाने की आकांक्षा बढ़ेगी।

दूसरी बात है कि भगवान की महत्ता जान लो कि भगवान सबसे महान् हैं। सब पदों से भी परमात्मपद ऊँचा है। सब यशस्वी और सुखियों से भी परमात्मपद को पाये हुओं का यश और सुख ऊँचा है।

जो लोग दान-पुण्य करके सुखी और यशस्वी होना चाहते हैं, ठीक है... धन्यवाद के पात्र हैं वे, लेकिन परमात्मप्राप्तिवालों का यश और सुख अद्भुत होता है। धन या सत्ता के बल से जो यशस्वी और सुखी होना चाहते हैं उनका यश-सुख भी स्थायी नहीं होता। जो अपने मधुर स्वभाव के बल से यशस्वी-सुखी होना चाहते हैं उनसे भी परमात्मप्राप्तिवालों का सुख और यश ऊँचा होता है। जो दान-पुण्य नहीं करते हैं उनकी अपेक्षा दान-पुण्य करनेवालों का यश-सुख टिकता है लेकिन अखंड आत्मतत्त्व को पाये हुओं का सुख अखंड टिकता है। यश तो उन्हीं का स्थायी होता है जो तीव्र प्रयास करके, ऊँचा प्रयास करके ऊँचे में ऊँची चीज आत्मदेव को पा लेता है।

इस प्रकार जितनी-जितनी आप ऊँची चीज पसंद करते हैं उतनी-उतनी ही तीव्र आकांक्षा रखनी पड़ती है। उतना ही ऊँचा पुरुषार्थ करना पड़ता है तभी उतना ऊँचा सुख या यश टिकता है।

बालक छोटे-छोटे खिलौनों से या लॉलीपॉप-बिस्किट से भी रीझ जाता है किन्तु वही बालक जब बड़ा हो जाता है तो क्या उसे हीरे के लिए लॉलीपॉप या बिस्किट से रिझाया जा सकता है ? नहीं, क्योंकि उसकी मति अब कुछ सुयोग्य बनी है। ऐसे ही यह

जगत भी लॉलीपॉप या बिस्किट के टुकड़े जैसा है और परमात्मा हीरों-का-हीरा है। आपकी मति ऐसी बने कि जगत की किसी भी ऊँचाई को पाने की लालच में ईश्वरप्राप्ति की इच्छा को न छोड़ दें। किसी शत्रु को ठीक करने में कहीं आपका ईश्वर न छूट जाये। किसी मित्र को रिझाने में कहीं आपका ईश्वरप्राप्ति का लक्ष्य न छूट जाये। किसी सुविधा को पाने में कहीं आप अपने लक्ष्य से च्युत न हो जायें। कोई असुविधा आपकी ईश्वरप्राप्ति की उमंग को न छुड़वा दे। ऐसी सतर्कता रखनी चाहिए।

"जाओ, समय बीता जा रहा है... अपने-अपने काम में तत्परता से लगो। बीता हुआ समय वापस नहीं आता है। अपना वायदा निभानेवाला व्यक्ति ही सफल होता है।"

गलती यह होती है कि ईश्वरप्राप्ति की इच्छा-आकांक्षा तीव्र न होने के कारण हम ईश्वरप्राप्ति की बात को एवं जहाँ ईश्वरप्राप्ति की बात सुनने को मिलती है उन महापुरुषों को सुनते हुए भी नहीं सुनते हैं।

'महाराज ! यह कैसे ? ईश्वरप्राप्ति की जो बातें बताते हैं उन महापुरुषों के वचनों को हम सुनते हुए भी नहीं सुनते, यह कैसे ?'

नश्वर धन पाकर जैसे लोभ बढ़ता है कि और मिले... और मिले... वैसा ही लोभ अगर शाश्वत के लिए बढ़ जाये, ईश्वरप्राप्ति के लिए बढ़ जाये तो फिर ईश्वर को क्या पाना, खुद ही को ईश्वरस्वरूप, ब्रह्मस्वरूप जान लोगे।

एक बार गौतम बुद्ध ने यही बात आनंद से कही थी कि : ''आनंद ! मुझे कोई नहीं सुनता है। सब अपने-अपने को ही सुनते हैं।''

''भंते ! यह कैसे ? सब आपको सुनने के लिए ही तो आते हैं।''

''नहीं आनंद ! नहीं। सब मुझे सुनने के लिए नहीं आते बल्कि अपने को ही सुनने के लिए आते हैं और जो जैसा है वैसा ही सुनता है।''

आनंद फिर भी इस बात को स्वीकार नहीं कर पा रहे थे। तब बुद्ध बोले :

''आज तुझे खुद ही इस बात का पता चल जायेगा, आनंद !''

शाम का सत्संग पूरा हुआ, तब बुद्ध ने प्रतिदिन की तरह ही आज भी दुहराया कि :

''जाओ, समय बीता जा रहा है... अपने-अपने काम में तत्परता से लगो। दिया हुआ वायदा जरूर निभाना चाहिए। बीता हुआ समय वापस नहीं आता है। अपना वायदा निभानेवाला व्यक्ति ही सफल होता है।''

इतना कहकर बुद्ध उठे एवं राहगीरों के रास्ते पर आनंद को लेकर खड़े हो गये। पहले-पहले एक वेश्या निकली। उससे पूछा :

''तुमको आज सत्संग में कौन-सी बात अच्छी लगी ?''

''भगवन् ! आप और यहाँ !! आप सचमुच में भगवान हैं, अंतर्यामी हैं। आज की यह बात तो बहुत ही बढ़िया थी कि 'दिया हुआ वचन निभाना चाहिए।' आज मैं एक बड़े सेठ को वक्त दे आयी थी और आपने मुझे वक्त पर ही अपना वायदा याद दिला दिया। आप सचमुच ही अंतर्यामी हैं।''

इस प्रकार वेश्या ने अपने को ही सुना, बुद्ध को नहीं।

इतने में दूसरा आदमी निकला। उससे पूछा : ''भाई ! आज तुम्हें सबसे ज्यादा क्या बढ़िया लगा ?''

उसने कहा : ''वायदा निभानेवाली बात बहुत बढ़िया थी। आज हमने अपने साथियों को वायदा दे रखा है और जहाँ डाका डालना है वहाँ यदि वक्त निकल जायेगा तो हम विफल हो जायेंगे। अतः वक्त कहीं बीत न जाये, इसकी याद दिला दी भंते ने।''

डाकू ने भी अपने को ही सुना। इतने में एक भिक्षु को रोका और उससे पूछा :

''भैया ! आज तुमने क्या सुना ?''

भिक्षु : ''हर मनुष्य माँ के गर्भ में प्रार्थना करता है कि 'हे प्रभु ! बाहर निकलकर तेरा भजन करेंगे ।' यह वादा करके गर्भ से बाहर निकलता है कि 'अब वक्त व्यर्थ नहीं करेंगे, अपना जीवन सार्थक करेंगे ।' भंते ! आप भी रोज कहते हैं कि 'समय बीत रहा है...' मौत कब आकर गला दबोच ले इसका कोई पता नहीं है इसलिए वक्त का सदुपयोग करेंगे । कहीं असत् वस्तुओं में वक्त न चला जाये, असत् आकांक्षाओं में वक्त न चला जाये, असत् इच्छाओं में वक्त न चला जाये क्योंकि 'बीता हुआ समय फिर वापस नहीं आता ।' आपकी यह बात हमें बहुत जँची ।''

तब बुद्ध ने आनंद से कहा : ''देख आनंद ! इसने भी अपने को ही सुना है । यह भिक्षु है, इसलिए अपने को ठीक ढंग से सुना है । डाकू और वेश्या ने अपने ढंग से सुना था और भिक्षु ने अपने ढंग से । इस प्रकार सब अपने को ही सुनते हैं ।''

फिर भी जैसे पिता बच्चे की हजार-हजार बात मान लेते हैं और बच्चे की भाषा में अपनी भाषा मिला देते हैं, 'रोटी' को 'लोती' बोल लेते हैं ताकि बच्चा आगे चलकर पिता की भाषा सीख ले । ऐसे ही बुद्ध पुरुष आपकी हजार-हजार 'हाँ' में 'हाँ' भर लेते हैं ताकि एक दिन तुम भी उनकी 'हाँ' में 'हाँ' भरने की योग्यता पा लो । ईश्वरप्राप्ति की इच्छा-आकांक्षा तीव्र करके मुक्त होने का सामर्थ्य पा लो ।

जब तक तुम संसाररूपी खिलौनों से खेलते हो तब तक ईश्वर भी सोचते हैं कि 'ठीक है, अभी तो बालक खेल रहा है ।' जब तुम सब खिलौनों को छोड़कर केवल उसीको पुकारते हो तो वह भी सब नियमों को ताक पर रखकर तुरंत प्रगट हो जाता है । जरूरत है तो बस, तीव्र आकांक्षा की ।

ईश्वरप्राप्ति की आकांक्षा अगर तीव्र हो गयी तो फिर मुक्ति पाना तो वैसे भी सहज ही हो जायेगा और इसके लिए आवश्यक है साधन-भजन की तीव्रता ।

मान लो, किसी दुकानदार का लक्ष्य है रोज २००० रूपयों का धंधा करने का । रात होते-होते उसका २५००-३००० रूपयों का धंधा हो जाता है । एक दिन अगर उसने सुबह-सुबह ही ४५०० रूपयों का धंधा कर लिया तो क्या वह दुकान बंद कर देगा कि आज का लक्ष्य पूरा हो गया ? नहीं नहीं, वह सारा दिन दुकान चालू रखेगा कि ५००० रूपयों का धंधा हो जाये... ६००० रूपयों का हो जाये । जब मनुष्य को नश्वर धन मिलता है तब भी वह लोभ बढ़ा लेता है ऐसे ही शाश्वत साधन-भजन और निष्ठा में लोभ बढ़ा दे तो तीव्र आकांक्षा आत्म-साक्षात्कार करा देगी ।

कबीरजी ने कहा है :

जितना हेत हराम से, उतना हरि से होय ।
कह कबीर ता दास को, पला न पकड़े कोय ॥

नश्वर चीजें पाकर आपकी उमंग जितनी बढ़ जाती है उतनी अगर शाश्वत को पाकर बढ़ जाये तो काम बन जाये । नश्वर धन पाकर जैसे लोभ बढ़ता है कि और मिले... और मिले... वैसा ही लोभ अगर शाश्वत के लिए बढ़ जाये, ईश्वरप्राप्ति के लिए बढ़ जाये, फिर ईश्वर को क्या पाना, खुद ही को ईश्वरस्वरूप, ब्रह्मस्वरूप जान लोगे ।

अगर ईश्वरप्राप्ति की तरतीव्र इच्छा तीन दिन के लिए भी हो जाये तो वह हृदयेश्वर प्रगट हो जाता है ।

एक बार विवेकानंद ने अपने गुरुदेव से प्रार्थना की : ''गुरुदेव ! कृपा करिये । परमात्मा का अनुभव हो जाये ।''

रामकृष्ण परमहंस : ''ईश्वर को पाने की इच्छा हुई है ?''

''हाँ, गुरुदेव !''

''ठीक है । इस आकांक्षा को बढ़ा ।''

''गुरुजी ! बहुत इच्छा है ।''

''अच्छा ! चलो, गंगाजी में नहाने चलते हैं ।''

रामकृष्ण परमहंस ले गये विवेकानंद को और कहा :

''नरेन्द्र ! गोता मार ।''

जैसे ही नरेन्द्र ने गोता मारा, रामकृष्ण ने उनकी गर्दन पकड़कर पानी में डुबाये रखी । थोड़ी देर बाद

गर्दन को छोड़ा। नरेन्द्र हाँफता-हाँफता ऊपर आया। रामकृष्ण ने पूछा :

''नरेन्द्र! पानी में क्या इच्छा हुई ? कुछ खाने की, किसीको ठीक करने की ?''

''गुरुजी ! यही इच्छा थी कि बस, बाहर निकलूँ, बाहर निकलूँ, बाहर निकलूँ... इसके सिवा कोई इच्छा नहीं थी।''

''चल, दुबारा गोता मार।''

नरेन्द्र ने दुबारा गोता मारा। इस बार रामकृष्ण ने पूर्व की अपेक्षा कुछ क्षण ज्यादा देर तक गर्दन को पानी में ही डुबाये रखा। गर्दन छोड़ने पर पुनः ज्यादा हाँफते हुए नरेन्द्र बाहर निकले तो रामकृष्ण ने पूछा :

''इस बार क्या इच्छा थी ?''

''केवल बाहर निकलने की इच्छा थी कि कैसे भी करके बाहर निकलूँ। यह तो गुरुदेव ! आपने दबा रखा था। कोई दूसरा होता तो प्रयत्न करके भी बाहर निकल जाता।''

''अच्छा ! फिर से गोता मारो।''

तीसरी बार नरेन्द्र ने गोता मारा। इस बार दोनों बार की तुलना में थोड़ी ज्यादा देर गर्दन पकड़े रखी रामकृष्णदेव ने। फिर नरेन्द्र कहीं ऊपर न पहुँच जाये यह सोचकर रामकृष्ण ने गर्दन को छोड़ा। हाँफते-घबराते नरेन्द्र बाहर निकले तो पूछा :

''इस बार क्या इच्छा थी ?''

''गुरुदेव ! कैसे भी करके, चाहे उत्तर से, दक्षिण से, पूर्व से, पश्चिम से बस, बाहर निकलूँ... बाहर निकलूँ... बाहर निकलूँ... इसके सिवा कोई इच्छा नहीं थी।''

रामकृष्णदेव ने कहा : ''तीन बार की बाहर निकलने की तीव्रतम इच्छा जब एक बार हो जाये, तीनों बार की तीव्रता जब एक साथ जुड़ जाये- ऐसी तीव्रता जिस क्षण होगी, उसी क्षण वह अंतर्यामी बेपरदा होने को तैयार है।''

जब तक बालक खिलौनों से खेलता रहता है तब तक माँ उसे गोद में नहीं लेती लेकिन एक... दो... तीन... खिलौनों से खेलने के बाद बालक खिलौने छोड़कर रो देता है तो माँ तुरंत उसे आकर गोद में उठा लेती है। ऐसे ही जब तक तुम संसाररूपी खिलौनों से खेलते हो तब तक ईश्वर भी सोचते हैं कि 'ठीक है, अभी तो बालक खेल रहा है।' किन्तु जब तुम सब खिलौनों को छोड़कर केवल उसीको पुकारते हो तो वह भी सब नियमों को ताक पर रखकर तुरंत प्रगट हो जाता है। जरूरत है तो बस, तीव्र आकांक्षा की।

जिसके पास तीव्र आकांक्षा, दृढ़ इच्छाशक्ति एवं ऊँचा प्रयास होता है वह इसी जन्म में ईश्वरप्राप्ति करने में सफल हो जाता है।

*

(पृष्ठ ३ का शेष)

युक्ति बताता हूँ कि तुझे इनमें से कोई भी दुःख न हो और एक ही वरदान में सब परेशानियाँ मिट जायें।''

गुरु ने बता दी युक्ति। शिष्य ने मंत्र जपा और देवता प्रसन्न होकर कहने लगे :

''वर माँग।''

तब वह बोला : ''हे देव ! मुझे और कुछ नहीं चाहिए, मैं केवल अपनी इन आँखों से अपनी पुत्रवधू को सोने के कलश में छाछ बिलोती हुई देखूँ, इतना ही वरदान दीजिए।''

अब, छाछ बिलोते हुए पुत्रवधू को देखना है तो शादी तो होगी ही। शादी भी होगी, बेटा भी होगा, बेटे की पत्नी भी आयेगी और सोने का कलश होगा तो धन भी आ ही गया। अर्थात् सब बातें एक ही वरदान में आ गयीं। किन्तु इससे भी ज्यादा प्रभावशाली यह आशीर्वाद है...

दुनिया की और सब चीजें कितनी भी मिल जायें किन्तु एक दिन तो छोड़कर जाना ही पड़ेगा। आज मृत्यु को याद किया तो फिर छूटनेवाली चीजों में आसक्ति नहीं होगी, ममता नहीं होगी और जो कभी छूटनेवाला नहीं है उस अछूट के प्रति, उस शाश्वत् के प्रति प्रीति हो जायेगी, तुम अपना शुद्ध-बुद्ध सच्चिदानंद, परब्रह्म परमात्मस्वरूप पा लोगे। जहाँ इन्द्र का वैभव भी नन्हा लगता है ऐसे आत्मवैभव को सदा के लिये पा लोगे।

मन की प्रसन्नता का महत्त्व और उपाय

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

सदैव प्रसन्न रहना ईश्वर की सर्वोपरि भक्ति है। भगवान श्रीकृष्ण ने भी कहा है : **मनः प्रसादः।**

मन की प्रसन्नता यह मन संबंधी तप है। जो प्रसन्नमन रहता है, वह आस-पड़ोस पर भी अपना जादुई असर छोड़ता है। जिसका स्वभाव चिड़चिड़ा है, वह नौकरी-धंधे में भी विफल हो जाता है और शत्रुता भी बढ़ा लेता है किन्तु जिसका स्वभाव प्रसन्नतायुक्त है वह अपने नौकरी-धंधे में तो सफल होता ही है, साथ ही मित्र भी बढ़ा लेता है। बिना धन के, बिना विशेष साधनों के भी बहुत सारी सहायता उन लोगों को मिल जाती है, जिनका स्वभाव मधुर है, जो प्रसन्न रहते हैं।

जो प्रसन्नमन रहता है, वह आस-पड़ोस पर भी अपना जादुई असर छोड़ता है। जिसका स्वभाव चिड़चिड़ा है, वह नौकरी-धंधे में भी विफल हो जाता है और शत्रुता भी बढ़ा लेता है।

उदारता के गुण से प्रसन्नता बढ़ती है, दूसरों के दुःख में दुःखी होकर हाथ बँटाने से भी प्रसन्नता बढ़ती है, दुर्गुण दुराचार से बचने से भी प्रसन्नता बढ़ती है और स्वाभाविक प्रसन्नता विकारों से संबंध-विच्छेद करके अपने राम में आराम पाने में सहायक होती है।

उदारता से दूसरों के दुःख में दुःखी होकर हाथ बँटाने से, दुर्गुण दुराचार से बचने से प्रसन्नता बढ़ती है और स्वाभाविक प्रसन्नता विकारों से संबंध-विच्छेद करके अपने राम में आराम पाने में सहायक होती है।

वस्तु, व्यक्ति और परिस्थितियों को लेकर जो राग-द्वेष होता है, वह हमारी प्रसन्नता को दबाता है। हालाँकि 'वस्तु, व्यक्ति और परिस्थितियाँ माया में हैं और मायापति मेरा राम मुझमें है और मैं राम में हूँ...' ऐसा चिंतन करने से भी प्रसंन्नता बढ़ती है।

मन को सदैव दया, क्षमा और उदारता से भर दो एवं भावों से सबकी भलाई चाहो तो प्रसन्नता की रक्षा होती है।

सुबह सूर्योदय से पूर्व स्नान करके, नाक से गहरे श्वास लें और मुँह से छोड़ें। ऐसा १०-१२ बार करने से भी मन की प्रसन्नता में मदद मिलती है।

हर एकाध घण्टे बाद, प्रसन्नता के लिए एकाध चुटकुला पढ़कर भी अब्राहम लिंकन प्रसन्न रहते थे और राष्ट्रपति होने में भी सफल हो सके।

काका साहब कालेलकर लिखते हैं : 'प्रतिदिन एक घण्टा हास्य-विनोद और प्रसन्नता के लिए निकालना ही चाहिए।'

मैं तो यह कहूँगा कि अलग से एक घण्टा न भी निकालो तो भी चालू व्यवहार में ही, बीच में एक-एक दो-दो मिनट करके भी एक घण्टा प्रसन्न रहने की कोशिश करनी चाहिए।

शरीर में ७२ हजार नाड़ियाँ होती हैं। उनकी शुद्धि न तो साबुन-पानी से होती है न ही धूप-अगरबत्ती से। उन सब सूक्ष्मतम नाड़ियों की शुद्धि हास्य से ही संभव है। जब व्यक्ति सात्विक हास्य हँसता है तो जहरीले कण बाहर आ जाते हैं और उसका चित्त हलका-फुलका हो जाता है। ऊँचे विचार आने लगते हैं। प्रसन्न रहकर विचार करें तो विचार बढ़िया होते हैं, उन्नतिकारक होते हैं जबकि दुःखी और क्रुद्ध होकर किये गये विचार विनाश की ओर ले जाते हैं।

भगवान श्रीराम जब राजगद्दी पर बैठे तब उनका पहला आदेश था : ''मैं कभी क्रुद्ध होकर कोई निर्णय

करूँ या मेरे द्वारा कोई शास्त्रसंमत प्रवृत्ति न हो तो आप लोगं मुझे निर्भीक होकर रोक देना।''

जो दूसरे को भयभीत करके सुखी होना चाहता है वह कभी प्रसन्न नहीं रह सकता। न आप भयभीत हो न दूसरों को भयभीत करो। न आप ठगे जाओ न औरों को ठगो। न आप मूर्ख बनो न औरों को मूर्ख बनाओ।

सुबह सूर्योदय से पूर्व स्नान करके, नाक से गहरे श्वास लें और मुँह से छोड़ें। ऐसा १०-१२ बार करने से भी मन की प्रसन्नता में मदद मिलती है।

प्राणीमात्र की भलाई सोचने से भी मन में प्रसन्नता आती है।

मदालसा ने अपने पुत्र अलरक से कहा था : ''बेटा ! छः वस्तुओं (अस्थि, रक्त, मवाद, उल्टी, दस्त, मृतक प्राणी) पर अगर रास्ते जाते नजर पड़ जाये तो सूर्यनारायण अथवा अग्नि का दर्शन करके अपनी प्रसन्नता की रक्षा करनी चाहिए। अगर सूर्य और अग्नि के दर्शन न हो सकें तो मंदिर की ध्वजा या कलश के ही दर्शन कर लेना चाहिए।''

शरीर में ७२ हजार नाड़ियाँ होती हैं। उनकी शुद्धि न तो साबुन-पानी से होती है न ही धूप-अगरबत्ती से। उन सब सूक्ष्मतम नाड़ियों की शुद्धि हास्य से ही संभव है। जब व्यक्ति सात्त्विक हास्य हँसता है तो जहरीले कण बाहर आ जाते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि कैसे भी करके मन की प्रसन्नता नहीं गँवानी चाहिए।

जो आदमी प्रसन्नचित्त है और प्राणीमात्र के लिए जिसके चित्त में वैरवृत्ति नहीं है, प्राणीमात्र की गहराई में जो अपने राम को देखता है उसे किसीकी निंदा-स्तुति भला उद्विग्न कैसे कर सकती है ?

''मैं कभी क्रुद्ध होकर कोई निर्णय करूँ या मेरे द्वारा कोई शास्त्रसंमत प्रवृत्ति न हो तो आप लोग मुझे निर्भीक होकर रोक देना।''

तीन पादरी आकर रमण महर्षि को डाँटने लगे :

''तुम बोलते हो कि 'मैं रोज भगवान का दर्शन करता हूँ।' लोगों से पुजवाने के लिए डींग हाँकते हो ? हम जाकर तुम्हारा कुप्रचार कर देंगे...'' आदि-आदि।

पादरियों को हुआ कि अभी रमण महर्षि नाराज हो जायेंगे, किन्तु महर्षि ज्यों-के-त्यों बैठे रहे।

पुनः वे कहने लगे : ''क्या तुम पर कोई असर नहीं होती ? रोज तुम तीन घंटे भगवान के दर्शन करते हो ? कहाँ है तुम्हारा भगवान ?''

महर्षि : ''कल सुबह आना। मैं जिस भगवान के दर्शन करता हूँ, आप लोगों को भी उनके दर्शन करवा दूँगा।''

पादरी हक्के-बक्के रह गये कि हम तो इन्हें उत्तेजित करने के लिए प्रयासरत रहे किन्तु ये तो सचमुच दर्शन करवाने के लिए तैयार हो गये ! चलो, कल सुबह भी आकर देख लेंगे।

दूसरे दिन पादरी नहा-धोकर पहुँचे तो सामने ही रमण महर्षि तैयार खड़े मिले और बोले :

''आप लोग आ गये ? चलो।''

चलते-चलते तीन मील दूर किसी घोर जंगल में पहुँचे। फिर महर्षि ने उन्हें संकेत किया : ''ठहरो।''

उस जंगल में एक झोंपड़ी थी। महर्षि उसके अंदर गये। पादरी लोग बाहर से सारा नजारा देखने लगे।

झोंपड़ी में कोढ़ से ग्रस्त बूढ़े दम्पती थे। महर्षि ने उनके साथ कुछ विनोद की बातें की, उन्हें हँसाया। फिर अपने साथ जो मरहम की शीशी ले गये थे उससे उनके शरीर की शुश्रूषा की। फिर इर्द-गिर्द से कुछ लकड़ियाँ एकत्रित कीं। तीन पत्थर लाकर चूल्हा जलाया और उस पर खिचड़ी पकायी। खिचड़ी पक जाने पर परोसकर उनको खिलायी। बर्तन माँज-धोकर रख दिये। शैय्या तैयार कर उन्हें सुला दिया।

फिर सत्संग की दो-चार बातें सुनाकर महर्षि बाहर निकले।

पूरा घटनाक्रम देखकर पादरियों की मति सुधरी और बोले :

''आज हमें पता चला कि दूसरे ईसा आप ही हैं। आपके चरणों में हम प्रणाम करते हैं।''

पादरी आये थे महर्षि को उद्विग्न करने, प्रभावित करने किन्तु प्राणीमात्र के प्रति उनके सहज प्रेम को देखकर स्वतः ही उनके कदमों में झुक गये क्योंकि महर्षि ने मन की प्रसन्नता को प्राप्त कर लिया था।

जिस समय यह जीव अपने को अकर्त्ता-अभोक्ता समझता है, उसी क्षण उसके सारे कल्मषं, मन की चंचलता, आकर्षण और अज्ञान दूर हो जाता है।

एक पंडित आया रमण महर्षि के पास और सवाल पर सवाल पूछने लगा।

महर्षि ने यथोचित उत्तर दिये किन्तु वह पंडित तो अपनी विद्वत्ता का प्रचार करना चाहता था। महर्षि भाँप गये उसके मन की बात और उन्होंने उठाया डंडा और पड़े पंडित के पीछे।

पंडित तो भागा। आगे पंडित... पीछे रमण महर्षि...

एक ओर तो पादरियों के सामने महर्षि एकदम शांत रहे किन्तु दूसरी ओर मौज आ गयी तो पंडित के पीछे डंडा लेकर भागे।

ज्ञानी की मौज होती है। मौज आ गयी तो बाहर डंडा उठा लिया और मौज आ गयी तो हाथ भी जोड़ लिये... किन्तु अन्तःकरण से तो उसी परब्रह्म परमात्मा में ज्यों-के-त्यों स्थित रहते हैं। ऐसे होते हैं ब्रह्मवेत्ता।

तस्य तुलना केन जायते।

उनकी तुलना किनसे की जाये ? अष्टावक्रजी महाराज कहते हैं :

धीरो न द्वेष्टि संसारमात्मानं न दिदृक्षति।
हर्षामर्षविनिर्मुक्तो न मृतो न च जीवति॥

'हर्ष-शोकरहित ज्ञानी संसार के प्रति न द्वेष करता है और न आत्मा को देखने की इच्छा करता है। वह न मरा हुआ है और न ही जीता है।'

(अष्टावक्र गीता : १८.८३)

न मृतो न च जीवति।

शरीर के जीवन को वह अपना जीवन नहीं मानता और शरीर के मरने से वह अपनी मौत नहीं मानता। अखा भगत ने भी कहा है :

राज्य करे रमणी रमे के ओढ़े मृग छाल।
जो करे सब सहज में सो साहेब का लाल॥

आत्मारामी संत राज्य भी कर सकता है। भगवान श्रीरामचंद्रजी व जनक राज्य करते थे। अंदर सुख लेने की वासना नहीं, वरन् अपने सुखस्वरूप में, मन के प्रसाद में टिके हैं और बाहर से **बहुजनहिताय बहुजनसुखाय** उनकी प्रवृत्ति होती रहती है, किन्तु कर्त्तापने के बोझे से वे विनिर्मुक्त होते हैं।

जिस समय यह जीव अपने को अकर्त्ता-अभोक्ता समझता है, उसी क्षण उसके सारे कल्मष, मन की चंचलता, आकर्षण और अज्ञान दूर हो जाता है।

❋

(पृष्ठ २० का शेष)

छठे वे लोग होते हैं जो जानबूझकर दूसरों को हानि पहुँचाते हैं। अपना लाभ भले कम हो किन्तु दूसरे को हानि कैसे पहुँचे, ऐसा प्रयास ईर्ष्यावश करते हैं।

... और सातवें ऐसे नीच चित्तवाले होते हैं जो अपनी हानि करके भी दूसरों को परेशान करते हैं, दुर्योधन, शकुनि जैसे। ऐसे लोग आसुरी भाव का आश्रय लेते हैं।

दैवी भाव का आश्रय लेनेवाला संयम-सदाचार का सहारा लेकर अपने जीवन को इन्द्रियों के विषय-विकारों में ही नहीं बिताता, वरन् अपने जीवन को सुखस्वरूप ईश्वर को पाने में लगा देता है और देर-सबेर ईश्वरत्व को पा भी लेता है।

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ६० वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया अक्तूबर तक अपना नया पता भिजवा दें।

प्रियतम की याद

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

'यहाँ बस्ती के शोरगुल के वातावरण में प्रभुनाम-स्मरण एकाग्र चित्त से नहीं होता है... आसन स्थिर करके बैठता ही हूँ कि इतने में पड़ोस के झगड़ालू पति-पत्नी का कलह मेरे ध्यान को छिन्न-भिन्न कर देता है... वह शान्त होता है उतने में ही कोई अपने तूफानी बच्चे को पीटता है तो उसके रोने-चिल्लाने की आवाज सताये बिना नहीं रहती... अब गाँव के बाहर कोई एकान्त स्थान ढूँढ़े बिना और कोई चारा नहीं दिखता है।'

यह सोचकर सिंध के एक सूफीवादी साधक ने बस्ती में ध्यान में बैठने से चित्त चलित होते रहने के कारण साधना का स्थान बदलने का निश्चय किया।

जाँच करते-करते गाँव से बाहर थोड़ी दूरी पर एक कुएँ के पास बड़ की घटादार छायावाली जगह उसे बहुत पसंद आई। कुआँ गाँव से दूर होने के कारण कोई भूला-भटका ही यहाँ पानी भरने आता था।

साधक ने वहाँ आसन ज़माया और प्रभु के नाम की माला घुमाना शुरू किया।

चार-पाँच दिन तो किसी भी प्रकार के विघ्न बिना जप-साधना इतनी अच्छी तरह से हुई और बड़ की छाया में ऐसी अपार शान्ति मिली कि साधक ने तो साधना के लिये यह स्थान निश्चित कर लिया। लेकिन पाँच-छः दिन के बाद कुएँ से पानी भरने आई हुई दो स्त्रियों की बातों ने वहाँ की शान्ति को भंग कर दिया। अँगूठे और अंगुलियों के सहारे माला के मनके तो घूम रहे थे लेकिन उन दो सहेलियों की बातें सुनने के प्रति ध्यान जाने से चित्त भी घूमने लगा।

हाल ही में शादी की हुई गाँव की दो बेटियाँ कल ही ससुराल से मायके आई थीं।

साधक ने सोचा : 'गाँव के कुएँ पर तो निजी बातचीत खुले दिल से नहीं हो सकती, शायद इसीलिए इन्होंने इस एकान्त कुएँ को पसंद किया है।'

'गाँव के कुएँ पर तो निजी बातचीत खुले दिल से नहीं हो सकती, शायद इसीलिए इन्होंने इस एकान्त कुएँ को पसंद किया है।'

एक युवती ने स्मित करते हुए अपनी सहेली से पूछा : ''अरी ! तुझे तेरे स्वामी की याद आती है ? लोग तो कहते हैं कि ससुराल में रहना कठिन है लेकिन मुझे तो शहद जैसा मीठा लगा। अपना आदमी अपने पर इतना प्रेम बरसाता हो तो वहाँ रहना किसको अच्छा नहीं लगेगा ? मैं तो वहाँ से आई हूँ तबसे दिन में पच्चीस-पचास बार उनकी याद आती रहती है। मेरे मन में ऐसा होता है कि मेरे माता-पिता जल्दी ही गौने की रस्म करके मुझे ससुराल विदा कर दें तो कितना अच्छा ! मुझे तो उनका वियोग सहना कठिन लगता है। क्या तुझे यहाँ अच्छा लगता है ? दिन में कितनी बार तू अपने पति को याद करती है ?'' इतना कहते हुए उसने अपनी बात पूरी की।

इस ओर साधक ने माला के मनके घुमाना छोड़ दिया। दूसरी सहेली का उत्तर सुनने को हृदय अधीर हो उठा।

इतने में तो दूसरी सहेली का स्वर सुनाई दिया : ''क्या कहा तूने ? मेरे पति मुझे दिन में कितनी बार याद आते हैं ?''

अपनी सहेली को उत्तर देने से पहले वह कुछ देर रुक गई... गहरे सोच में डूब गई। फिर बोल उठी : ''मेरे स्वामी तो मेरे प्राणाधार हैं। उनका मेरे पर कितना प्रेम है उसे नापने का कोई मापदंड मेरे पास नहीं है।

प्रेम तो अनुभव करने की चीज है। उस अनुभव का मुख से वर्णन करने के लिए शब्द ढूँढ़ने जाती हूँ तो चित्त स्वामी के चरणों में लीन हो जाता है। तू कहती है कि तेरे पति तुझे दिन में पच्चीस-पचास बार याद आये बिना नहीं रहते हैं लेकिन मेरा अनुभव तुझसे अलग है। मेरे हृदय से तो वे पलभर के लिये भी भुलाये नहीं जाते हैं। मेरे हर एक साँस में उनके नाम की रट चलती रहती है। मेरे शरीर का रोम-रोम उनकी याद से झंकृत होता रहता है। अब तू ही बता, मैं कैसे गिनती करूँ कि मेरे स्वामी मुझे दिन में कितनी बार याद आते हैं ?''

पानी के मटके भरकर दोनों सहेलियाँ तो विदा हो गईं लेकिन उनकी बातचीत साधक के हृदय में हलचल मचा गयी। दूसरी युवती की बात ने उसे प्रतीति करा दी कि परमात्मा के प्रति उसका प्रेम पहली सहेली जैसा है। इसलिए तो उसकी गिनती रखने के लिये माला के मनके घुमाता हूँ कि 'इतनी बार प्रभु के नाम का स्मरण किया।'

साधक ने मन-ही-मन दृढ़ निर्णय करते हुए कहा : ''सचमुच इस बड़ की छाया में आज मुझे परम ज्ञान प्राप्त हुआ है। माला के मनके घुमाकर प्रभु के नाम की कितनी माला घुमाता हूँ ? ऐसा मेरा बाह्याचार मेरे अहं को और गहरा बना रहा था। आज से इस माला की गिनती का अहंकार छोड़कर मेरे जीवन का हरेक पल प्यारे के नामस्मरण में ही बिताऊँगा। दूसरी युवती की बात को गुरुपद पर स्थापना करके अपने चित्त को अहर्निश प्रभु के ध्यान में मग्न रखूँगा। जो समय गिनती करने में लगाया जाता था, वह भी प्रभु के चिंतन में बिताऊँगा। जैसे कीट भ्रमर का चिंतन करते-करते भ्रमर बन जाता है ऐसे मैं भी प्रभुनाम के निरंतर स्मरण से प्रभुमय हो जाऊँगा। परब्रह्म पद की प्राप्ति कर लूँगा।''

साधक ने मन-ही-मन दृढ़ निर्णय करते हुए कहा : 'आज से इस माला की गिनती का अहंकार छोड़कर मेरे जीवन का हरेक पल प्यारे के नामस्मरण में ही बिताऊँगा।'

...और सचमुच में उस साधक का जीवन-प्रवाह ही पलट गया। संसारी लोगों के बीच वह कभी-कभार ही आता ...प्यारे प्रभु के स्मरण-चिंतन में रहकर उसने ब्रह्म का साक्षात्कार कर लिया और सदैव ब्रह्मानंद की मस्ती में मस्त रहने लगा। आगे चलकर वही साधक एक उच्च कोटि के सूफीवादी संत के रूप में विख्यात हुआ।

(पृष्ठ २२ का शेष)

इसी प्रकार आत्मधन तुम्हारे पास है। उसीकी सत्ता से तुम खाते-पीते, सोते-उठते, बैठते हो। वही ईश्वर सदा तुम्हारे साथ है, तुम्हारे पास है। फिर भी तुम्हारी हालत उसी भिखमंगे जैसी हो रही है। तुम चिल्लरों से सम्राट होना चाहते हो कि 'हे आँख! तू दृश्य देखकर मुझे सुख दे ... हे नाक ! तू सुगंध से मुझे सुख दे ...' इसी प्रकार सारी जिंदगी भीख ही तो माँगते हो। फिर भी कंगाल के कंगाल। सुंदर दृश्य, सुगंध, स्वादिष्ट भोजन आदि कितना भी मिला फिर भी भीख माँगने की वृत्ति नहीं गयी।

इसकी जगह जहाँ हो वहीं थोड़ी गहराई में जाओ तो कैसा ? जैसे, वह भिखमंगा जहाँ था वहीं अगर थोड़ा खोदता तो बिना भीख माँगे ही उसे सम्राट का पूरा धन मिल जाता। ऐसे ही जिसकी सत्ता से तुम्हारा शरीर खाता-पीता दिखता है उसी अंतर्यामी की गहराई में गोता - मारो तो बिना विषय-विकाररूपी चिल्लर की भीख माँगे ही अखूट सुख का खजाना तुम्हारे हाथ लग जायेगा।

जिसकी सत्ता से तुम्हारा शरीर खाता-पीता दिखता है उसी अंतर्यामी की गहराई में गोता - मारो तो बिना विषय-विकाररूपी चिल्लर की भीख माँगे ही अखूट सुख का खजाना तुम्हारे हाथ लग जायेगा।

भले खोदने में थोड़ी मेहनत पड़ती है, भीख माँगना आसान है किन्तु बुद्धिमान खोदना उचित समझेगा और भीख माँगना व्यर्थ।

सात प्रकार के व्यक्ति

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

संतों-भक्तों को सज्जन तो होना चाहिए लेकिन दुर्बलमन कभी नहीं होना चाहिए।

छोटे-से-छोटे, क्षुद्र-से-क्षुद्र प्राणियों को भी आत्मरक्षा करने की प्रेरणा प्रकृति ने दी है और साधन भी दिया है । मधुमक्खी को डंक दिये हैं तो गाय-भैंस-बकरी जैसे प्राणियों को सींग देकर आत्मरक्षा के हथियार दे दिये हैं । इसी प्रकार आपको भी मति दी है। आप दूसरे का तो न छीनिये किन्तु कोई आपका छीनता है तो आप भी अपनी वस्तु की और हक की रक्षा करिये। नाहक डरिये मत, नाहक परेशान मत होइये, बल्कि अपना आत्मबल जगाकर परिस्थितियों से टक्कर लीजिये।

नायं आत्मा बलहीनेन लभ्यः ।

अर्जुन सोचता है कि युद्ध करके क्या करूँगा ? मैं तो तपस्वी का जीवन बिताऊँगा । तब श्रीकृष्ण ने बराबर डाँटते हुए कहा है :

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते ।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप ॥

'हे अर्जुन ! नपुंसकता को मत प्राप्त हो । यह तेरे में योग्य नहीं है। हे परंतप ! तुच्छ हृदय की दुर्बलता को त्यागकर युद्ध के लिए खड़ा हो जा।'

(गीता : २.३)

दुर्बलता का नाम शांति नहीं है और कई बार बिना क्रांति के शांति भी नहीं होती। समुद्र-मंथन कर क्रांति नहीं होती तो लक्ष्मी, अमृत, उच्चैश्रवाः, ऐरावत आदि भी नहीं निकलते।

भक्त के जीवन में कभी परेशानियाँ आतीं हैं तो रोता है कि 'हाय रे... हाय ! भगवान रूठे हैं... मेरे करम फूटे हैं।' नहीं नहीं, सोचने की दृष्टि जरूर फूटी है । तुम भज़न करो और विघ्न-बाधाएँ आयें तो समझना चाहिए कि विघ्न-बाधा देकर भगवान तुम्हारी सोयी हुई आत्मशक्ति जगाना चाहते हैं।

कर्म तो तब फूटे होते हैं कि जब तुम निर्दोषों को सताते हो । अपनी आत्मरक्षा करते हो तो कर्म कैसे फूटे हो सकते हैं ? मीरा के जीवन में कितनी विघ्न-बाधाएँ आयीं, शबरी के जीवन में कितनी विघ्न-बाधाएँ आयीं... फिर भी वे डटी रहीं । मीरा, शबरी, कबीर, नानक, प्रहलाद के दुःख-कष्टों के आगे तुम्हारे दुःख-कष्टों की क्या बिसात ? श्रीकृष्ण और श्रीराम के जीवन में जो विघ्न-बाधाएँ आयीं उनकी तुलना में तुम्हारी विघ्न-बाधाएँ कितनी हैं ?

> *मीरा के जीवन में कितनी विघ्न-बाधाएँ आयीं, शबरी के जीवन में कितनी विघ्न-बाधाएँ आयीं... फिर भी वे डटी रहीं । मीरा, शबरी, कबीर, नानक, प्रहलाद के दुःख-कष्टों के आगे तुम्हारे दुःख-कष्टों की क्या बिसात ? श्रीकृष्ण और श्रीराम के जीवन में जो विघ्न-बाधाएँ आयीं उनकी तुलना में तुम्हारी विघ्न-बाधाएँ कितनी हैं ?*

सज्जन होना तो बढ़िया है किन्तु डरे-सहमे रहना बहुत बुरा है। सात प्रकार के व्यक्ति माने गये हैं :

एक वे व्यक्ति होते हैं जो अपनी थोड़ी-बहुत हानि हो जाये तो कोई हर्ज नहीं, किन्तु आत्मभाव से दूसरे का थोड़ा लाभ हो जाता है तो उन्हें आनंद आता है। जैसे, एक बार मदनमोहन मालवीय स्कूल जा रहे थे । मार्ग में एक कुत्ता कराहता हुआ पड़ा था । कई लोग नाक-भौं सिकोड़ते हुए चले जाते थे। किन्तु इस विद्यार्थी मदनमोहन मालवीय से सहा न गया। 'अपने समय-पैसे की भले थोड़ी हानि हो जाये तो हो जाये,

किन्तु इस जीव को थोड़ी शांति हो जाय तो अच्छा हो।' - यह सोचकर वह भागता हुआ अस्पताल गया और डॉक्टर से बोला :

''घाव पर लगाने की दवा और मलहम दीजिए।''

डॉक्टर : ''कहाँ है घाव ?''

मालवीय : ''मुझे नहीं, मरीज को घाव है और मरीज रास्ते में पड़ा है। उसे यहाँ नहीं ला सकता।''

डॉक्टर : ''क्या उम्र है ? स्त्री है कि पुरुष ?''

मालवीय : ''न स्त्री हैं, न पुरुष है वरन् कुत्ता है।''

डॉक्टर हँसा और बोला : ''जा भाई ! जा, स्कूल जा। ऐसे कितने कुत्तों के घावों को तू मलहम लगायेगा ?''

मालवीय : ''नहीं नहीं, डॉक्टर साहब ! वह बड़ा दुःखी है। आप पैसे ले लीजिए और दवा-मलहम दे दीजिये।''

''अगर तुम कुत्ते को मलहम लगाने जाओगे भी तो वह तो कुत्ता है, तुम्हें काट भी सकता है।''

''आप इसकी चिंता मत करिये। आप तो केवल दवा दे दीजिये।''

बालक का आग्रह देखकर चेतावनी के साथ डॉक्टर ने दवा-मलहम दे दिया।

मालवीयजी ने एक लकड़ी का टुकड़ा ढूँढ़कर उस पर रूई बाँधी और उसे टिंक्चर बेन्जोइन में डुबोकर कुत्ते के घाव पर लगाया। पहले तो कुत्ता गुर्राया किन्तु थोड़ी-सी राहत होते ही समझ गया कि यह मेरे घाव को ठीक करने के लिए ऐसा कर रहा है। धन्यवाद के भाव से कुत्ते ने पूँछ हिलायी।

कुत्ते से आश्वस्त होकर मालवीयजी ने पास जाकर घाव को साफ किया और मलहम आदि लगाकर स्कूल की ओर रवाना हुए। ऐसा करने में समय और पैसे की तो थोड़ी हानि हुई किन्तु दूसरे की पीड़ा को दूर करने से अंतरात्मा की जो उन्नति हुई, उसका ही फल है कि आज करोड़ों लोग पं. मदनमोहन मालवीयजी का नाम बड़े आदर से लेते हैं।

अपने दुःख में रोनेवाले
तू मुस्कुराना सीख ले।
औरों के दुःख दर्द में
आँसू बहाना सीख ले॥
आप खाने में मजा नहीं
जो औरों को खिलाने में।
जिन्दगी है चार दिन की
तू किसीके काम आना सीख ले॥

दुर्बलता का नाम शांति नहीं है और कई बार बिना क्रांति के शांति भी नहीं होती। समुद्र-मंथन कर क्रांति नहीं होती तो लक्ष्मी, अमृत, उच्चैश्रवाः, ऐरावत आदि भी नहीं निकलते।

दूसरे वे व्यक्ति होते हैं जो यह सोचते हैं कि दूसरों का चाहे कुछ भी हो किन्तु हमारा भला होना चाहिए। अपनेवालों से उदारता और दूसरों से अन्याय-ऐसा आदमी सुखी नहीं रह सकता। भाभी-ननद का झगड़ा हो तो सास का कर्त्तव्य है कि अपनी बेटी को अपने ढंग से समझाये। बेटी से न्याय करे और बहू से उदारता रखे तो घर स्वर्ग हो जायेगा। दो बच्चे झगड़ते हों तो अपने बच्चे से न्याय एवं दूसरे के बच्चे से उदारता रखनी चाहिए।

छोटे-से-छोटे, क्षुद्र-से-क्षुद्र प्राणियों को भी आत्मरक्षा करने की प्रेरणा प्रकृति ने दी है और साधन भी दिया है। मधुमक्खी को डंक दिये हैं तो गाय-भैंस-बकरी जैसे प्राणियों को सींग देकर आत्मरक्षा के हथियार दे दिये हैं।

तीसरे वे व्यक्ति होते हैं जो अपनी हानि न हो और दूसरे का लाभ हो, ऐसा प्रयत्न करते हैं।

चौथे वे लोग होते हैं जो केवल अपने लाभ की चिंता करते हैं। दूसरों के लाभ की चिंता भी नहीं करते और दूसरों को हानि भी नहीं पहुँचाते।

पाँचवें वे लोग होते हैं जो दूसरे को हानि और अपना लाभ होता हो तो अपने लाभ को महत्त्व देते हैं, दूसरे की हानि की चिंता नहीं करते। (शेष पृष्ठ १६ पर)

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

साधु की अवज्ञा का फल

साधु-संतों के द्वारा कभी-कभार भगवान अपना ऐश्वर्य, अपना वैभव, अपना सामर्थ्य प्रगट कर देते हैं ताकि आम आदमी को ईश्वर की तरफ लगने में सुविधा हो।

सन् १९७४-७५ की बात है : जयपुर के पास हनुमानजी का एक मंदिर है जहाँ हर साल मेला लगता है और मेले में जयपुर के आस-पास के देहातों से भी बहुत लोग आते हैं।

आपको क्या बतायें महाराज ! भगवान **कर्तुं अकर्तुं अन्यथाकर्तुं समर्थः** हैं।

वहाँ मेले में हलवाई आदि की दुकानें भी होती हैं। एक लोभी हलवाई के पास एक साधु बाबा आये। उन्होंने हलवाई के हाथ में चवन्नी रखी और कहा : ''पाव भर पेड़े दे दे।''

हलवाई : ''महाराज ! चार आने में पाव भर पेड़े कैसे मिलेंगे ? पाव भर पेड़े बारह आने के मिलेंगे, चार आने में नहीं।''

साधु : ''हमारे राम के पास तो चवन्नी ही है और दो दिन से भूखे हैं। भगवान तुम्हारा भला करेगा, दे दे पावभर पेड़े।''

हलवाई : ''महाराज ! मुफ्त का माल खाना चाहते हो ? बड़े आये हो... पेड़े खाने का शौक लगा है ?''

साधु महाराज ने दो-तीन बार कहा किन्तु हलवाई न माना और उस चवन्नी को भी एक गड्ढे में फेंक दिया। साधु महाराज भी हनुमानजी के तगड़े उपासक रहे होंगे। बोले : ''पेड़े नहीं देते हो तो मत दो लेकिन चवन्नी तो वापस दो।''

हलवाई : ''चवन्नी पड़ी है गड्ढे में। जाओ, तुम भी गड्ढे में जाओ।''

साधु ने सोचा : 'अब तो हद हो गयी !' फिर कहा : ''तो क्या पेड़े भी नहीं दोगे और पैसे भी वापस नहीं दोगे ?''

''नहीं दूँगा। तुम्हारे बाप का माल है क्या ?''

साधु तो यह सुनकर एक शिला पर जाकर बैठ गये। संकल्प में परिस्थितियों को बदलने की शक्ति होती है। जहाँ शुभ संकल्प होता है वहाँ कुदरत में चमत्कार भी घटने लगते हैं।

> *संकल्प में परिस्थितियों को बदलने की शक्ति होती है। जहाँ शुभ संकल्प होता है, वहाँ कुदरत में चमत्कार भी घटने लगते हैं।*

रात्रि का समय होने लगा तो दुकानदार ने अपना गल्ला गिना। चार सौ नब्बे रूपये थे, उन्हें थैली में बाँधा और पाँच सौ पूरे करने की ताक में ग्राहकों को पटाने लगा।

इतने में कहीं से चार तगड़े बंदर आ गये। एक बंदर ने उठायी चार सौ नब्बेवाली थैली और पेड़ पर चढ़ गया। दूसरे बंदर ने थाल झपट लिया। तीसरे बंदर ने कुछ पेड़े ले जाकर शिला पर बैठे हुए साधु की गोद में रख दिये और चौथा बंदर इधर से उधर कूदता हुआ शोर मचाने लगा।

> *एक बंदर ने उठायी चार सौ नब्बेवाली थैली और पेड़ पर चढ़ गया। दूसरे बंदर ने थाल झपट लिया। तीसरे बंदर ने कुछ पेड़े ले जाकर शिला पर बैठे हुए साधु की गोद में रख दिये और चौथा बंदर इधर से उधर कूदता हुआ शोर मचाने लगा।*

यह देखकर दुकानदार के कंठ में प्राण आ गये। उसने कई उपाय किये कि बंदर पैसे की थैली गिरा दे। जलेबी-पकौड़े आदि का प्रलोभन दिखाया

किन्तु वह बंदर भी साधारण बंदर नहीं था। उसने थैली नहीं छोड़ी तो नहीं छोड़ी। आखिर किसीने कहा कि जिस साधुं का अपमान किया था उसीके पैर पकड़ो। हलवाई गया और पैरों में गिरता हुआ बोला : ''महाराज ! गलती हो गयी। संत तो दयालु होते हैं।''

साधु : ''गलती हो गयी तो अपने बाप से माफी ले। जो सबका माई-बाप है उससे माफी ले। मैं क्या जानूँ ? जिसने भेजा है बंदरों को उन्हीं से माफी माँग।''

हलवाई ने जो बचे हुए थे वे सेर-डेढ़ सेर पेड़े लिये और गया हनुमानजी के मंदिर में। भोग लगाकर प्रार्थना करने लगा : '**जै जै हनुमान गोसाईं...** मेरी रक्षा करो...।' कुछ पेड़े प्रसाद करके बाँट दिये और पाव-डेढ़ पाव पेड़े लाकर उन साधु महाराज के चरणों में रखे।

> *''गलती हो गयी तो अपने बाप से माफी ले। जो सबका माई-बाप है, उससे माफी ले। मैं क्या जानूँ ? जिसने भेजा है बंदरों को उन्हीं से माफी माँग।''*

साधु : ''हमारी चवन्नी कहाँ है ?''

''गड्ढे में गिरी है।''

साधु : ''अच्छा ! मुझे बोलता था कि गड्ढे में गिर। अब तू ही गड्ढे में गिर और चवन्नी लाकर मुझे दे।''

हलवाई ने गड्ढे में से चवन्नी ढूँढ़कर, धोकर चरणों में रखी। साधु ने हनुमानजी से प्रार्थना करते हुए कहा : ''प्रभो ! यह आपका ही बालक है। दया करो।''

> *आत्मधन तुम्हारे पास है। उसीकी सत्ता से तुम खाते-पीते, सोते-जागते, उठते-बैठते हो। फिर भी तुम्हारी हालत भिखमंगे जैसी हो रही है। तुम चिल्लरों से सम्राट होना चाहते हो।*

देखते-देखते बंदर ने रूपयों की थैली हलवाई के सामने फेंकी। लोगों ने पैसे इकट्ठे करके हलवाई को थमाये। बंदर कहाँ से आये, कहाँ गये ? यह पता न चल सका।

• यदि अहंकार, स्वार्थ, लोभवश या अन्य किसी भी तरह से साधु-संतों की अवज्ञा हो जाती है तो फिर प्रकृति में चमत्कारिक घटनाएँ घटकर भी मानव की आँखें खोलने का प्रयास उस अंतर्यामी सर्वेश्वर द्वारा हो जाता है। फिर चाहे बंदर के रूप में ही क्यों न वह मदद करने के लिए आ जाये !

जिन खोजा तिन पाइया गहरे पानी पैठ

एक भिखमंगे ने सोचा कि मुझे राजा बनना है। उसने इस हेतु पुरुषार्थ भी चालू कर दिया और राजा बनने की इच्छा-आकाक्षां को तीव्र कर दिया।

जिस फुटपाथ पर वह फटे-पुराने कपड़े पहनकर, फटी-पुरानी चदरिया लेकर बैठता था, वहाँ अब वह सुबह चार बजे आकर बैठने लगा। वहीं पर परदा लगाकर उसने एक छोटी-सी झोंपड़ी भी बना ली। सुबह के चार बजे से रात के १२ बजे तक वह वहीं भीख माँगता रहता। कभी-कभी तो रात के दो बजे भी उठकर बैठ जाता और ट्रेन के यात्रियों से भीख माँग लेता।

इस प्रकार दस-बीस-पच्चीस पैसे लेते-लेते उसने बहुत सारी चिल्लर इकट्ठी कर ली। धनवान जो बनना था ! राजा जो बनना था ! किन्तु कितनी ही चिल्लर हो, भला चिल्लरों से कोई राजा कैसे बन सकता है ?

समय पाकर वह मर गया। जब मर गया तो समाज-सेवकों ने उसके झोंपड़े में देखा तो चिल्लरों से घड़ा भरा हुआ था, एकाध छोटा डब्बा भी भरा था। यह देखकर उन्हें हुआ कि इधर-उधर कहीं धन गाड़ा तो नहीं है ? उन्होंने उस जगह को खोदा। जब खोदा तो पूर्वकाल में किसी सम्राट द्वारा गाड़े गये सोने-हीरे-जवाहरात से भरे कलश निकले !

उसी पर उस भिखारी की झोंपड़ी थी। वह दिन-रात उस पर उठता-बैठता, खाता-पीता था। दिन-रात भीख माँगे जा रहा था। क्यों ? क्योंकि उसको उस गड़े धन का पता ही नहीं था और गड़े धन का पता न होने के कारण वह जीवनभर भिखमंगा ही बना रहा।

(शेष पृष्ठ १८ पर)

बालक रामानुजम्

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

महाराष्ट्र के एक छोटे-से गाँव में एक लड़का था, जिसका नाम था रामानुजम् । उसका पिता काश्तकार (बढ़ई) था। सातवीं कक्षा पढ़ाकर पिता ने रामानुजम् को नौकरी पर लगवा दिया। मुंबई की एक फर्म में रामानुजम् चपरासी की नौकरी करने लगा।

आठ-दस मुनीम की वह चाकरी करता। पानी, चाय आदि लाना, झाड़ू लगाना आदि उसका काम था। मुनीम लोग के बहीखाते का हिसाब-किताब कभी-कभार नहीं मिल पाता, वे परेशान हो जाते तब रामानुजम् कहता : ''मुझसे पूछ लो।''

''चल चल, तू क्या बतायेगा ? तू तो सातवीं पास है। हमने कोई धूप में बाल सफेद नहीं किये हैं। हमें समझ में नहीं आता तो तू क्या बतायेगा ?''

लेकिन रामानुजम् हताश न हुआ। एक बार... दो बार... तीन बार... चार बार कहने पर आखिर एक दिन मुनीम ने कहा : ''रोज पूछता है तो चल, आज यह हिसाब तू मिलाकर दिखा।''

रामानुजम् ने वह हिसाब चुटकी बजाते मिलाकर दिखा दिया। मुनीम हैरान रह गया कि 'इतना-सा बालक और गणित में इतना कुशल !'

अब तो हिसाब- किताब में जिस मुनीम की गड़बड़ी होती वह रामानुजम् को बुला लेता। रामानुजम् की प्रतिभा को देखकर लोगों ने कहा : ''जब तुझमें इतनी योग्यता है, गणित में तू अद्वितीय है तो तू अपनी योग्यता विश्वप्रसिद्ध गणितज्ञ मि. हार्डी को लिखकर भेज।''

रामानुजम् ने अपनी योग्यता का परिचय दिया और कुछ नमूने लिखकर मि. हार्डी तक भिजवा दिये। उसकी प्रतिभा को परखकर मि. हार्डी ने उसे यूरोप बुला लिया। हार्डी जो सवाल पूछता, रामानुजम् उसके उत्तर तुरंत दे देता और सारे-के-सारे उत्तर सही ! हार्डी दंग रह गया कि 'यह कैसा होनहार बालक है !'

हार्डी ने एक कान्फ्रेंस बुलायी जिसमें बड़ी संख्या में गणितज्ञ और मनोवैज्ञानिक एकत्रित हुए। एक हॉल में एक बड़ा बोर्ड लगा दिया गया। जिसको भी गणित का कोई सवाल पूछना होता, रामानुजम् से पूछता और रामानुजम् तुरंत जवाब दे देता। गणितज्ञ तो सवाल पूछते किन्तु मनोवैज्ञानिक देखते कि 'यह इतनी जल्दी उत्तर कहाँ से ले आता हैं ?' मनोवैज्ञानिक एवं गणितज्ञ भी उसकी प्रखर प्रतिभा को देखकर दंग रह गये। हाँ, एक बात जो मनोवैज्ञानिकों के ध्यान में आयी वह यह थी कि जब बोर्ड पर सवाल लिखे जाते हैं तब रामानुजम् की आँखें बोर्ड पर स्थिर हो जाती हैं। वह बड़ी एकाग्रता से प्रश्न पढ़ता है और प्रश्न पढ़ने के बाद आँख थोड़ी देर बंद हो जाती है। उसकी वृत्ति आज्ञाचक्र में चली जाती है। बचपन में किसी योगी की कृपा इस पर बरसी है, तभी यह इतनी जल्दी जवाब ले आता है।

> *''रोज पूछता है तो चल, आज यह हिसाब तू मिलाकर दिखा।'' रामानुजम् ने वह हिसाब चुटकी में मिलाकर दिखा दिया। मुनीम हैरान रह गया।*

एक बार किसी दुर्घटना में रामानुजम् को तीन फ्रेक्चर हो गये। उसे अस्पताल में दाखिल किया गया। डॉक्टरों नें पूछा :

''रामानुजम् ! बड़ी पीड़ा हो रही है ?''

तब रामानुजम् ने जवाब दिया : ''नहीं, पीड़ा मुझे नहीं होती, पीड़ा इस शरीर को होती है। दुःख मन को होता है। मुझ आत्मा को नहीं होता। मेरे गुरु का यह ज्ञान मेरी रक्षा कर रहा है।''

डॉक्टर दंग रह गये कि यह भारत के काश्तकार का लड़का है कि कोई तत्त्वचिंतक है ! सोक्रेटीस जैसी बात करता है !

हार्डी को रामानुजम् की दुर्घटना का पता चला । वह गाड़ी भगाता-भगाता आया । रामानुजम् ने अपने कमरे की खिड़की से हार्डी की कार के ४ नंबर पढ़ लिये और उस नंबर के आधार पर गणित के चार नमूने बना दिये । हार्डी जब पूछता-पूछता रामानुजम् के कमरे में पहुँचा, तब रामानुजम् ने कहा : ''मि. हार्डी ! आपकी गाड़ी के ये चार नंबर और गणित के ये चार नमूने लो ।''

हार्डी ने नमूने देखे । एक नमूने को हार्डी कुछ ही देर में समझ गया । दूसरे नमूने को समझने में उसे कुछ घंटे लगे । तीसरा नमूना समझने में हार्डी को छः महीने लगे और चौथा नमूना समझने में खुद विफल रहा तब वसीयत लिखकर गया कि 'भारत के एक देहाती इलाके में रहनेवाले सातवीं पढ़े हुए रामानुजम् ने यह गणित का जो नमूना बनाया है, वह बिलकुल सच्चा होगा । मेरे बाद के गणितवेत्ता इस पर जरूर ध्यान देना, खोज करना । यह सही निकलेगा क्योंकि रामानुजम् का बनाया हुआ है ।' ...और वह नमूना १२ साल के बाद सही साबित हो गया । कैसी है हमारी भारतीय संस्कृति ! कैसी है हमारी आध्यात्मिक धरोहर ! विद्यार्थियों ! जानो अपनी महिमा को ! पहचानो अपनी संस्कृति की गरिमा को और संतों के पास से उन्नत जीवन की कुँजियाँ सीखकर अपने जीवन को भी दिव्यता की ओर ले चलो ।

*

ऐसी राह दिखाओ सतगुरु

ऐसी राह दिखाओ सतगुरु, भवसागर तर जाऊँ ।
कोई नहीं है जग में अपना, किसको मीत बनाऊँ ॥

कदम-कदम पर ठोकर खाई पाँव पड़े हैं छाले ।
यह जीवन तो व्यर्थ गँवाया खुले न आस के ताले ।
मैं बन्धन में ऐसा उलझा चाहूँ निकल न पाऊँ ।
ऐसी प्रीत ज़गाओ मन में तेरे दर पर आऊँ ॥
ऐसी राह दिखाओ...

मैं क्या जानूँ आरती-वन्दन मैं तो हूँ अज्ञानी ।
दे दो मुझको दान ज्ञान का मैंने झोली तानी ।
सूख गया है ताल हृदय का जल कैसे भर लाऊँ ।
ऐसा राग सिखा दो मुझको तेरे ही गुण गाऊँ ॥
ऐसी राह दिखाओ...

- प्रकाश 'सूना'
मुजफ्फरनगर

हिन्दू मरीज दाखिल हुआ... ईसाई बनकर बाहर आया...

खिस्ती गिरजाघरों ने दिल्ली को अपने शिकंजे में लिया है । राजधानी के अनेक गिरजाघर इस शिकंजे का संचालन कर रहे हैं । हिन्दुओं को ईसाई बनने के लिए प्रेरित किये जा रहे हैं ।

दिल्ली के व्यस्त संस्थानों में ईसाई मिशनरी घूम रहे हैं और लोगों को जीवन के दुःखों से मुक्ति एवं शांति पाने के लिए चर्च में आनेके लिए आकर्षित करते हैं ।

ये लोग बड़े-बड़े कार्यक्रमों का आयोजन करते हैं । हिन्दुओं को ईसाई बन जाने के लिए प्रेरित करते हैं । 'आपके दुःखों का जवाब ईसा हैं' ऐसा कहकर आकर्षित करते हैं । दुःखमुक्ति समारोहों का आयोजन करते हैं । उन समारोहों में 'बहरा सुनता है... अंधा देखता है... पंगु चलता है...' ऐसी घोषणाएँ होती हैं ।

दिल्ली की अस्पतालों में ईसाई परिचारिकाओं की संख्या विशाल है । मरीजों को ईसा के पाठ पढ़ाये जाते हैं । ईसा के नाम पर इलाज करके उन मरीजों का धर्मपरिवर्तन कराया जाता है ।

सफदरगंज अस्पताल में हिन्दू मध्यम वर्गीय महिला सुनीता कालरा भरती हुई । वह हिन्दू थी लेकिन दस दिन के बाद जब वह बाहर आयी तो ईसाई बन गयी थी । ऐसे कई प्रसंग हैं । ऐसी प्रवृत्तियों को कौन रोक सकेगा ?

दिग्विजयसिंह
मुख्यमंत्री
मध्य प्रदेश शासन, भोपाल - ४६२००४
१७ सितम्बर, १९९७.

संदेश

प्रसन्नता का विषय है कि संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका 'ऋषि प्रसाद' अपने प्रकाशन के आठवें वर्ष में प्रवेश कर रही है।

शिक्षा और संस्कृति मनुष्य को एक धार्मिक व्यक्तित्व प्रदान करती है जिसका लक्ष्य मानवसेवा होता है और समाज में सद्भाव रहे इसके लिए वह हमेशा प्रयासरत रहता है। आज हम जिस भौतिक युग में जी रहे हैं उसमें जरूरी है कि लोगों को शिक्षा और संस्कृति से ओतप्रोत ऐसी धार्मिकता प्रदान करें ताकि वह समाज में जोड़ने का काम करे।

संत श्री आसारामजी ने अपने व्यक्तित्व व कृतित्व से पूरे समाज में धार्मिक सद्भाव का एक नया वातावरण बनाया है। उन्होंने समाज में लोगों को जीने की एक नई दृष्टि प्रदान की है।

मुझे आशा है कि संत श्री आसारामजी के प्रवचनों से, उनके द्वारा स्थापित आश्रमों से मिलनेवाली शिक्षा से तथा पत्रिका 'ऋषि प्रसाद' के माध्यम से मानव समाज में बदलाव का वातावरण बनेगा जिसमें सभी लोग मिलजुलकर सद्भाव की भावना से रह सकेंगे।

शुभकामनाओं सहित...

(हस्ताक्षर)
दिग्विजयसिंह

मुही राम सैकिया
राज्यमंत्री
मानव संसाधन विकास मंत्रालय,
शिक्षा विभाग,
भारत सरकार, नई दिल्ली - 1

संदेश

संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका 'ऋषि प्रसाद' ने ७ साल पूरे करके ८ वें साल में प्रवेश किया है यह जानकर मुझे खुशी हुई।

मैं इस बात से आनंदित हुआ हूँ कि यह सामयिक तीन भाषाओं में प्रकाशित होता है जिसमें उच्च आध्यात्मिक उपदेश छपते हैं और जिसका वाचक वर्ग पूरे विश्व में दस लाख से अधिक है।

संत श्री आसारामजी आश्रम के द्वारा किये जानेवाले इस सेवाकार्य की सफलता के लिए मैं अपनी शुभेच्छा व्यक्त करता हूँ।

(हस्ताक्षर)
मुही राम सैकिया
१७-९-१९९७

*

एम. पी. वीरेन्द्रकुमार
श्रम राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार)
भारत सरकार, नई दिल्ली - 1

संदेश

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित मासिक सामयिक 'ऋषि प्रसाद' ने संत श्री आसारामजी आश्रम के रजत जयंती महोत्सव पर ८ वें वर्ष में प्रवेश किया है।

इस भव्य प्रसंग पर मैं संत श्री आसारामजी के विश्व में चलते हुए ५० आश्रमों के सफल संचालन के लिए और मासिक पत्रिका के लिए अपनी शुभेच्छा भेजता हूँ।

(हस्ताक्षर)
एम. पी. वीरेन्द्रकुमार

ऑपरेशन के अभिशाप से बचिए

प्रो. एलोंजो क्लार्क (एम. डी.) का कहना है :

''हमारी सभी दवाइयाँ विष हैं और इसके फलस्वरूप दवाई की हर एक मात्रा रोगी की जीवनशक्ति का ह्रास करती है।''

आज कल जरा-जरा-सी बात में ऑपरेशन की सलाह दे दी जाती है। वाहन का मैकेनिक भी अगर कहे कि 'क्या पता, यह पार्ट बदलने पर भी आपका वाहन ठीक होगा कि नहीं ?' तो हम लोग उसके गैरेज में वाहन रिपेयर नहीं करवाते लेकिन आश्चर्य है कि सर्जन-डॉक्टर के द्वारा गारण्टी न देने पर भी ऑपरेशन करवा लेते हैं !

युद्ध में घायल सैनिकों तथा दुर्घटनाग्रस्त रोगियों को ऑपरेशन द्वारा ठीक किया जा सकता है किन्तु हर रोगी को छुरी की तेजधार के घाट उतारकर निर्बल बना देना मानवता के विरुद्ध उपचार है।

ऑपरेशन द्वारा शरीर के विजातीय द्रव्यों को निकालने की अपेक्षा जल, मिट्टी, सूर्यकिरण और शुद्ध वायु की कुदरती मदद से उन्हें बाहर निकालना एक सुरक्षित और सुविधाजनक उपाय है। किसी अनुभवी वैद्य की सलाह लेकर एवं समुचित विश्राम एवं अनुकूल आहार का सही तरीके से सेवन करके भी पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ पाया जा सकता है।

अंग्रेजी दवाइयों की गुलामी कब तक ?

सच्चा स्वास्थ्य यदि दवाइयों से मिलता तो कोई भी डॉक्टर, कैमिस्ट या उनके परिवार का कोई भी व्यक्ति कभी बीमार नहीं पड़ता। स्वास्थ्य खरीदने से मिलता तो संसार में कोई भी धनवान रोगी नहीं रहता। स्वास्थ्य इंजेक्शनों, यंत्रों, चिकित्सालयों के विशाल भवनों और डॉक्टर की डिग्रियों से नहीं मिलता अपितु स्वास्थ्य के नियमों का पालन करने से एवं संयमी जीवन जीने से मिलता है।

अशुद्ध और अखाद्य भोजन, अनियमित रहन-सहन, संकुचित विचार तथा छल-कपट से भरा व्यवहार- ये विविध रोगों के स्रोत हैं। कोई भी दवाई इन बीमारियों का स्थायी इलाज नहीं कर सकती। थोड़े समय के लिए दवाई एक रोग को दबाकर, कुछ ही समय में दूसरा रोग उभार देती है। अतः अगर सर्वसाधारण जन इन दवाइयों की गुलामी से बचकर, अपना आहार शुद्ध, रहन-सहन नियमित, विचार उदार तथा व्यवहार प्रेममय बनाये रखें तो वे सदा स्वस्थ, सुखी, संतुष्ट एवं प्रसन्न बने रहेंगे। आदर्श आहार-विहार और विचार-व्यवहार ये चहुँमुखी सुख-समृद्धि की कुँजियाँ हैं।

सर्दी-गर्मी सहन करने की शक्ति, काम एवं क्रोध को नियंत्रण में रखने की शक्ति, कठिन परिश्रम करने की योग्यता, स्फूर्ति, सहनशीलता, हँसमुखता, भूख बराबर लगना, शौच साफ आना और गहरी नींद- ये सच्चे स्वास्थ्य के प्रमुख लक्षण हैं।

डॉक्टरी इलाज के जन्मदाता हेपोक्रेटस ने स्वस्थ जीवन के संबंध में एक सुंदर बात कही है :

पेट नरम, पैर गरम, सिर को रखो ठण्डा।
घर में आये रोग तो मारो उसको डण्डा॥

प्राकृतिक चिकित्सा के मूल तत्त्व

अगर मनुष्य कुछ बातों को जान ले तो वह सदैव स्वस्थ रह सकता है।

आज कल बहुत-से रोगों का मुख्य कारण स्नायु-दौर्बल्य तथा मानसिक तनाव (Tension) है। **प्रार्थना** से आत्मविश्वास बढ़ता है, निर्भयता आती है, मानसिक शांति मिलती है एवं नसों में ढ़ीलापन (Relaxation) उत्पन्न होता है अतः स्नायविक तथा मानसिक रोगों से बचाव व छुटकारा मिल जाता है।

रात्रि-विश्राम के समय प्रार्थना का नियम अनिद्रा रोग एवं सपनों से बचाता है।

इसी प्रकार **शवासन** भी मानसिक तनाव के कारण होनेवाले रोगों से बचने के लिए लाभदायी है।

प्राणायाम का नियम फेफड़ों को शक्तिशाली रखता है एवं मानसिक तथा शारीरिक रोगों से बचाता है। प्राणायाम दीर्घ जीवन जीने की कुँजी है। प्राणायाम के साथ **शुभ चिन्तन** किया जाये तो मानसिक एवं शारीरिक दोनों रोगों से बचाव एवं छुटकारा मिलता है। शरीर के जिस अंग में दर्द एवं दुर्बलता तथा रोग हो उसकी ओर अपना ध्यान रखते हुए प्राणायाम करना चाहिए। शुद्ध वायु नाक द्वारा अंदर भरते समय सोचना चाहिए कि प्रकृति से स्वास्थ्य-वर्धक वायु वहाँ पहुँच रही है जहाँ मुझे दर्द है। आधा मिनट श्वास रोक रखें व पीड़ित स्थान का चिंतन कर उस अंग में हल्की-सी हिलचाल करें। श्वास छोड़ते समय यह भावना करनी चाहिए कि 'पीड़ित अंग से गंदी हवा के रूप में रोग बाहर निकल रहा है एवं मैं रोगमुक्त हो रहा हूँ। ॐ... ॐ... ॐ...' इस प्रकार नियमित अभ्यास करने से स्वास्थ्यप्राप्ति में बड़ी सहायता मिलती है।

सावधानी : जितना समय धीरे-धीरे श्वास अन्दर भरने में लगाया जाये, उससे दुगुना समय वायु को धीर-धीरे बाहर निकालने में लगाना चाहिए। भीतर श्वास रोकने को आभ्यांतर कुंभक व बाहर रोकने को बाह्य कुंभक कहते हैं। रोगी एवं दुर्बल व्यक्ति आभ्यांतर व बाह्य दोनों कुंभक करें। श्वास आधा मिनट न रोक सकें तो दो पाँच सेकंड ही श्वास रोकें। ऐसे बाह्य व आभ्यांतर कुंभक को पाँच-छः बार करने से नाड़ीशुद्धि व रोगमुक्ति में अद्भुत सहायता मिलती है।

स्वाध्याय अर्थात् जीवन में सत्साहित्य के अध्ययन का नियम मन को शांत एवं प्रसन्न रखकर तन को नीरोग रहने में सहायक होता है।

स्वास्थ्य का मूल आधार **संयम** है। रोगी अवस्था में केवल भोजनसुधार द्वारा भी खोया हुआ स्वास्थ्य प्राप्त होता है। बिना संयम के कीमती दवाई भी लाभ नहीं करती है। संयम से रहनेवाले व्यक्ति को दवाई की आवश्यकता ही नहीं पड़ती है। जहाँ संयम है वहाँ स्वास्थ्य है और जहाँ स्वास्थ्य है वहीं आनंद एवं सफलता है।

बार-बार स्वाद के वशीभूत होकर बिना भूख के खाने को असंयम और नियम से आवश्यकतानुसार स्वास्थ्यवर्धक आहार लेने को संयम कहते हैं। स्वाद की गुलामी स्वास्थ्य का घोर शत्रु है। बार-बार कुछ-न-कुछ खाते रहने के कारण अपच, मन्दाग्नि, कब्ज, पेचिश, जुकाम, खाँसी, सिरदर्द, उदरशूल आदि रोग होते हैं। फिर भी यदि हम संयम का महत्त्व न समझें तो जीवनभर दुर्बलता, बीमारी, निराशा ही प्राप्त होगी।

सदैव स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक है **भोजन की आदतों में सुधार।**

मैदे के स्थान पर चोकरयुक्त आटा, वनस्पति घी के स्थान पर तिल्ली का तेल, हो सके तो शुद्ध घी, (मूँगफली और मूँगफली का तेल स्वास्थ्य के लिए ज्यादा हितकारी नहीं है।) सफेद शक्कर के स्थान पर मिश्री या साधारण गुड़ एवं शहद, अचार के स्थान पर ताजी चटनी, अण्डे-मांसादि के स्थान पर दूध-मक्खन, दाल, सूखे मेवे आदि का प्रयोग शरीर को अनेक रोगों से बचाता है।

इसी प्रकार चाय-कॉफी, शराब, बीड़ी-सिगरेट एवं तम्बाकू जैसी नशीली वस्तुओं के सेवन से बचकर भी आप अनेक रोगों से बच सकते हैं।

बाजारु मिठाइयाँ, सोने-चाँदी के वर्कवाली मिठाइयाँ, पेप्सीकोला आदि ठण्डे पेय पदार्थ, आईसक्रीम एवं चॉकलेट के सेवन से बचें।

एल्यूमिनियम के बर्तन में पकाने और खाने के स्थान पर मिट्टी, चीनी, काँच, स्टील या कलई किये हुए पीतल के बर्तनों का प्रयोग करें। एल्यूमिनियम के बर्तनों का भोजन टी. बी., दमा आदि कई बीमारियों को आमंत्रित करता है। सावधान !

व्यायाम, सूर्यकिरणों का सेवन, मालिश एवं समुचित विश्राम भी अनेक रोगों से रक्षा करता है।

उपरोक्त कुछ बातों को जीवन में अपनाने से मनुष्य सब रोगों से बचा रहता है और यदि कभी रोगग्रस्त हो भी जाये तो शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ कर लेता है।

हृदय रोग के चार उपाय

हमारे अथर्ववेद में हृदयरोग का गहन सरल उपचार बताया गया है। अथर्ववेद के प्रथम कांड के २२ वें गहन में चार मंत्र हैं और उनमें हृदयरोग दूर करने के चार ही उपचार बताये गये हैं :

(१) उगते हुए सूर्य की सिंदूरी किरणों में लगभग १० मिनट तक हृदयरोग दूर करने की अपरिमेय शक्ति होती है। अतः रोगी प्रातःकाल सूर्योदय का इंतजार करे और यह प्रयत्न करे कि सूर्य की सर्वप्रथम किरण उस पर पड़े।

(२) मोटी गाँठवाली हल्दी कपड़छन करके ८ मास रख लें। फिर प्रतिदिन लाल गाय के दूध में १ चम्मच घोलकर पियें। हल्दी में यह खास गुण है कि यह रक्तवाहिनी नसों में जमे हुए रक्त के थक्कों को पिघला देती है और नसों को साफ कर देती है। जब रक्तवाहिनी नलिकाएँ साफ हो जायेंगी, तब वह कचरा यानी विजातीय द्रव्य पेट में जमा हो जायेगा और बाद में मल के द्वारा बाहर निकल जाएगा।

(३) रोहिणी नामक हरड़ कपड़छन करके रख लें। अगर रोहिणी हरड़ नहीं मिले तो कोई भी हरड़ जो बहड़े के आकार की होती है वह लें। इस हरड़ का लगभग एक चम्मच चूर्ण रात को सोते समय लाल गाय के दूध में लें। लाल गाय अगर देशी नहीं मिले तो जरसी लाल गाय के दूध के साथ मिलाकर लें। यह विजातीय द्रव्य को शरीर से मल, पेशाब और पसीने इत्यादि के रूप में बाहर निकाल देती है।

(४) कंठीदार एक तोता या तोते का जोड़ा पालें। जिस कमरे में रोगी रहता हो उसीमें उसके बिस्तर के पास पिंजड़े को रखें। रोगी की साँस तोते को लगे और तोते की साँस रोगी को लगे। जैसे वृक्ष कार्बन डायोक्साईड ग्रहण करते हैं और ऑक्सीजन छोड़ते हैं, उसी प्रकार तोता हृदयरोग को स्वयं ग्रहण कर लेता है और रोगी को स्वस्थता प्रदान करता है। पिंजड़े में अमरूद, सेव, बेर इत्यादि फल रख दें और तोते द्वारा चोंच मारे गये फल रोगी को खिलायें। हृदयरोग लगभग पाँच दिन में समाप्त हो जायेगा। हो सकता है कि इस दौरान एक, दो या तीन तोते मर जायें। जैसे ही तोते मरें, उसी दिन पिंजड़ा अच्छी तरह साफ करके दूसरा तोता रख दें। यहाँ एक खास बात और है कि जिस कमरे में तोते का पिंजड़ा होगा उसमें किसीको भी हृदयरोग का दौरा नहीं होगा।

आश्रम द्वारा चिकित्सा व्यवस्था

सूरत आश्रम : साँई श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र। फोन : 687935. हर शनि, रवि, गुरु।

अमदावाद आश्रम : धन्वन्तरि आरोग्य केन्द्र। फोन : 7505010, 7505011. हर बुध, रवि।

थाणा (ईस्ट) मुंबई : संत श्री आसारामजी आरोग्य केन्द्र। फोन : 5401639. हर माह का पहला एवं तीसरा सोमवार।

उल्हासनगर आश्रम : साँई श्री लीलाशाहजी आरोग्य केन्द्र । फोन : 542696. हर माह का पहला एवं तीसरा मंगलवार।

प्रकाशा आश्रम : धन्वन्तरि आरोग्य केन्द्र। फोन : (02565) 40275. हर रविवार। विशेष में हर मास का अंतिम सोमवार।

दिल्ली आश्रम : धन्वन्तरि आरोग्य केन्द्र। फोन : 5729338, 5764161. हर रवि, गुरु।

विसनगर : संत श्री आसारामजी आश्रम। प्रत्येक माह का पहला रविवार।

भैरवी (धरमपुर, वलसाड़) : संत श्री आसारामजी आश्रम। फोन : 22785. हर माह का दूसरा और चौथा मंगलवार।

गुरुवर ! अब मैं शरण तिहारी

अनजाना पथ दूर नगरिया, रात कठिन अंधियारी।
काम-क्रोध-मद-लोभ मोह की पग-पग पर बटमारी॥
चौरासी का आना-जाना सिर पर गठरी भारी।
जन्म-मरण की दुस्तर नदिया जर्जर नाव हमारी॥
स्वप्नलोक यह मायानगरी भ्रमित सकल नर-नारी।
झूठे हैं सम्बन्ध देह के झूठी दुनियादारी॥
मैं-मेरी की भूल-भुलैया अहंकार अति भारी।
करन-करावनहार तुम्हीं प्रभु ! चरणन की बलिहारी॥

कृपा भयी गुरुदेव की...

मैं एम. कॉम. का विद्यार्थी हूँ। पूज्य बापू से मंत्रदीक्षा लेने का सौभाग्य अभी तक नहीं मिल पाया है किन्तु मन से ही पूज्य बापू को सद्गुरु मान चुका हूँ। पिछले कई वर्षों से नियमित रूप से 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका एवं पूज्यश्री की सत्संगवाणी की पुस्तकें पढ़ता हूँ एवं सत्संग की कैसेटें भी सुनता हूँ। कभी-कभार आश्रम आता-जाता रहता हूँ।

इस वर्ष अपैल '९७ में एम. कॉम. भाग-२ के 'एकाउन्टेन्ट' के तीसरे प्रश्नपत्र की परीक्षा दे रहा था। परीक्षा का समय ३ से ६ था। जैसे ही प्रश्नपत्र मेरे हाथ में आया वैसे ही मुझे लगा कि 'मुझे इसमें से विशेष कुछ भी नहीं आता है और थोड़ा-बहुत जो भी आता था, वह भी घबराहट में भूल गया। चार बजने को आये, तब तक मैं कुछ भी नहीं लिख पाया। मुझे रोना आ गया और ऐसा लगा कि मैं जरूर अनुत्तीर्ण हो जाऊँगा।'

इतने में अचानक मेरा ध्यान मेरे गले में पहने हुए पूज्यश्री के पेंडल की ओर गया। मैंने मन-ही-मन पूज्यश्री से प्रार्थना की कि : ''हे गुरुदेव ! अब आपके इस बालक का भविष्य आपके ही हाथ में है। हे प्रभु ! आप जो चाहें, कर सकते हैं।''

पूज्य गुरुदेव ने मेरी प्रार्थना स्वीकार की। मेरा मन शांत हो गया और धीरे-धीरे मैं एक के बाद एक प्रश्न हल करता गया और शांति से प्रश्नपत्र पूरा किया। जब परीक्षाफल निकला तब मुझे पता चला कि जिसमें मुझे उत्तीर्ण होने तक की आशा नहीं थी, उस विषय में मेरे कॉलेज में मुझे सर्वाधिक अंक (५७) मिले हैं।

पूज्य सद्गुरुदेव की कृपा का किन शब्दों में बयान करूँ ? पू. गुरुदेव के श्रीचरणों में मेरी इतनी ही विनम्र प्रार्थना है कि : ''आपके श्रीचरणों में हमारी श्रद्धा-भक्ति अधिकाधिक दृढ़ होती रहे, जिससे हम मात्र संसार की लौकिक परीक्षा में ही नहीं, वरन् ब्रह्मविद्या की परीक्षाओं में भी उत्तीर्ण होकर कृतार्थ हो जाएँ।''

- मीनेश भालचंद्र भट्ट

तलोद, साबरकाँठा (गुज.).

गुरुसेवा के कार्य में आत्मभोग देना यह गुरु के पवित्र चरणों के प्रति भक्तिभाव विकसित करने का उत्तम साधन है।

- स्वामी शिवानंदजी

नासिक : सूरत में हजारों लोगों को श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर श्रीकृष्ण-रस में सराबोर करने के पश्चात् पूज्यश्री दिनांक : २६ अगस्त '९७ को नासिक पधारे। भगवान त्र्यंबकेश्वर की इस पावन स्थली में, पुण्यतोया गोदावरी के तट पर, एकांत सुरम्य वातावरण में संत श्री आसारामजी आश्रम के निर्माण का कार्य चल रहा है।

यहाँ दिनांक : २८ से ३१ अगस्त '९७ तक हजारों लोगों ने पूज्यश्री की अमृतवाणी का रसपान करते हुए धन्यता का अनुभव किया। तत्पश्चात् पूज्यश्री औरंगाबाद के लिए रवाना हुए।

औरंगाबाद : औरंगाबाद में बिना किसी पूर्व तैयारी के भी इतना बढ़िया कार्यक्रम हुआ, जिसकी कल्पना तक न थी। औरंगाबाद के पाँचसत्रीय कार्यक्रम में हजारों लोग पूज्यश्री की पीयूषवर्षी वाणी से लाभान्वित हुए। इसी दौरान जैन समाज के अत्यंत आग्रहवशात् पूज्यश्री महावीर भवन पधारे। यहाँ पूरे जैन समाज व जैन साध्वियों ने अत्यंत श्रद्धा व भक्ति से पूज्यश्री के सत्संग का श्रवण किया।

औरंगाबाद के पश्चात् पूज्यश्री एकांतवास के लिए दिल्ली पधार गये।

अलवर : दिनांक : १० से १४ सितंबर '९७ तक अलवर (राज.) में गीता-भागवत सत्संग समारोह का भव्य कार्यक्रम संपन्न हुआ। कहते हैं कि इस धरा पर पिछले सौ वर्षों में पहली बार इतने विशाल सत्संग समारोह का आयोजन हुआ। अलख पुरुष के औलिया को अलवर में पाकर यहाँ की जनता भावविभोर हो उठी। सभी धन्यवाद से भरी हुई निगाहों से पूज्यश्री द्वारा प्रवाहित प्रभु-प्रेम के प्यालों को पिये जा रहे थे।

विदाई के समय लाखों-लाखों आँखें सजल होकर पूज्यश्री की ओर टकटकी लगाकर निहार रही थीं। मानो, कह रही थीं कि **'फिर-फिर से आइयो, गुरुजी !'** पूज्यश्री उनके प्रेम एवं सद्भाव का अभिवादन करते हुए मंच से ही रेवाड़ी के लिए रवाना हो गये।

इसी बीच पूज्यश्री ने भर्तृहरि एवं गोपीचंद की गुफा का अवलोकन किया जो कि अलवर से ३० कि.मी. की दूरी पर है। जहाँ मेला लगता है, लाखों लोगों का आना-जाना होता है वहाँ प्रशासन की ऐसी लापरवाही कि चलने के लिए सड़क तक का ठिकाना नहीं ! पानी की समुचित व्यवस्था तक नहीं !! बिजली की कोई उचित व्यवस्था नहीं !!! भेड़-बकरियों की तरह श्रद्धालुओं को धकेला जा रहा था...

ऐसे महान् संतों की तीर्थभूमि के प्रति की हुई उपेक्षा से पूज्यश्री का चित्त दुःखी हो उठा। पूज्यश्री ने सोचा कि प्रशासन को सचेत करने के लिए लोगों को आवाज उठानी चाहिए। भारतीय तीर्थों के प्रति उदासीन रहकर प्रशासन को भारतीयों के साथ सौतेली माँ जैसा व्यवहार नहीं करना चाहिए।

रेवाड़ी : रेवाड़ी समिति लम्बे अर्से से रेवाड़ी की धरती पर आश्रम-निर्माण के लिए तय की गई भूमि पर पूज्यश्री की चरणरज पड़े- इस प्रतीक्षा में थी। जब पूज्यश्री रेवाड़ी पहुँचे तब रेवाड़ी एवं आसपास के गाँवों से सैकड़ों लोग दर्शन-सत्संग के लिए उमड़ पड़े एवं पूज्यश्री की सत्संग-सरिता में स्नान करके धन्य हो उठे।

बहादुरगढ़ : सोमवार, दिनांक : १५ सितंबर '९७ को दोपहर में पूज्यश्री रेवाड़ी से रोहतक होते हुए बहादुरगढ़ पहुँचे। यहाँ बहादुरगढ़ समिति द्वारा प्रार्थना-स्थली बनाने के पावन प्रयास के लिए पूज्यश्री ने सहमति दे दी एवं उस भूमि पर स्वयं भी पधारे। धनभागी हैं वे लोग, जिनकी धरती पर उच्च संस्कार देनेवाले, जीवन को सुव्यवस्थित करनेवाले साधना-भवन बनाने का, आश्रम बनाने का संकल्प साकार हुआ।

दिल्ली : सोमवार १५ सितंबर '९७ की शाम को ही पूज्यश्री दिल्ली पहुँचे। यहाँ दिल्ली समिति द्वारा पंद्रह सौ सेवाधारियों के अलग-अलग विभाग बनाये गये थे, जैसे कि यातायात विभाग, रसोई विभाग, सुरक्षा विभाग, सत्संग विभाग, सफाई विभाग, चिकित्सा विभाग आदि-आदि। बैण्ड-बाजों के साथ इन सब विभागों के सेवाधारी एवं पुण्यात्मा कार्यकर्त्ताओं की परेड और परिचय विधि देखते ही बनता था। उसके बाद चल पड़ी कतारें गुरुदर्शन के लिए...

दिनांक : १६ सितंबर '९७ को सत्संग-दर्शन के प्यासे भक्तों की तो भीड़ ही लगी हुई थी। सरल स्वभाव, नम्रता की मूर्ति दिल्ली के मुख्यमंत्री माननीय श्री साहिबसिंह वर्मा भी सत्संग-श्रवण के लिए आ बैठे व पूज्यश्री का स्वागत करते-करते गद्गद् हो उठे। देश के मुख्यमंत्रियों को माननीय श्री साहिबसिंहजी की नाईं महापुरुषों और साधकों के दिल की दुआएँ लेने की कला सीखनी चाहिए। दिल्ली के मुख्यमंत्री में लोगों ने संतों के प्रति श्रद्धा एवं व्यवहार में सत्संग-प्रेम व भारतीयता की सुगंध को निहारा।

दिनांक : १६ सितंबर '९७ की शाम को ही पूज्यश्री चण्डीगढ़ के लिए रवाना हो गये।

चण्डीगढ़ : दिनांक १७ से २१ सितंबर '९७ तक आयोजित सत्संग समारोह में चण्डीगढ़ तथा आसपास के इलाकों से अपार जनसैलाब उमड़ा था। यहाँ कार्यक्रम के दौरान् पंजाब तथा हरियाणा के अनेक वरिष्ठ नेताओं तथा मान्यवरों ने पूज्यश्री से आशीर्वाद प्राप्त किया।

पंजाब सरकार के राज्यपाल माननीय श्री पी. एन. के. छिब्बर ने पूज्यश्री को माल्यार्पण कर आशिष प्राप्त करते हुए कहा : ''**चण्डीगढ़ शहर आधुनिकता एवं विविधताओं से भरा हुआ है। हर तरह की उन्नति यहाँ पर हुई है। पूज्यश्री का चण्डीगढ़ पधारना इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि भागवत के माध्यम से आधुनिकता की बुराइयों को दूर करके शांति बरकरार रखें।**''

हरियाणा सरकार के शिक्षामंत्री माननीय श्री रामविलास शर्माजी तो लगातार तीन दिन तक दर्शन एवं सत्संग हेतु पधारे थे। उन्होंने पुष्पहार द्वारा पूज्यश्री का स्वागत करके आशीर्वाद प्राप्त करते हुए कहा :

''**आज दुनिया में राजनेताओं के हिन्दुस्तान की कदर कम हो रही है लेकिन संतों के भारत की तो आज भी दुनिया में कदर हो रही है। ऐसे संत पू. बापूजी को मैं नमन करता हूँ।**''

पंजाब के मुख्यमंत्री माननीय श्री प्रकाशसिंह बादलजी दिनांक : २० सितंबर को सपरिवार सत्संग में पधारे थे। उन्होंने माल्यार्पण करके इतनी नम्रता से पू. बापू का स्वागत किया कि मानो प्राचीन काल के कोई राजा हों। उन्होंने कहा : ''**हिन्दुस्तान ऋषियों की, गुरुओं की धरती है। इस हिन्दुस्तान में अमन, शांति, एकता एवं भाईचारा बना रहे इसीलिए पू. बापूजी से आशीर्वाद पाने आया हूँ।**'' उन्होंने बिनती करते हुए जब कहा : ''**पंजाब की धरती पर पू. बापूजी बार-बार पधारें।**'' तब तालियों की गड़गड़ाहट से गगन गूँजने लगा। इस पर पू. बापूजी ने सस्नेह कहा :

''**प्रकाशसिंहजी बादल किसानों के लिए निःशुल्क विद्युत देकर बारहों महीने पानी बरसा रहे हैं। हमारे बादल बरसते ही रहें।**''

यहाँ स्मरणीय है कि पूज्यश्री की अमृतवाणी सुनकर, उनके दर्शन पाकर, उनसे मिलकर हर व्यक्ति को, हर जाति को, हर पार्टी को, हर समाज को यह महसूस होता है कि '**बापूजी हमारे ही हैं।**' सबको आत्मवत् देखनेवाले संत के लिए भला कौन पराया? '**एक नूर से सब जग ऊपजा...**' को माननेवाले, प्राणीमात्र के परम हितैषी पूज्य बापू के ज्ञानामृत का रसपान करके सभी मत, पंथ, मजहब, जाति और पार्टी के लोग धन्य हुए।

पंजाब एवं हरियाणा दोनों की राजधानी होने के नाते दोनों सरकारों के कई मंत्रियों ने, माननीय श्री सीताराम शर्मा, माननीय श्री कैलासजी शर्मा, माननीय श्री सेठ किसनदासजी शर्मा (रोहतक), माननीय श्री रामभजन अग्रवाल (भिवानी), माननीय श्री शशी मेहता, माननीय श्री करणसिंह दलाल, हरियाणा के मुख्यमंत्री की पत्नी एवं उनकी बेटी रत्ना, माननीय श्री गणेशीलालजी, माननीय श्री बलरामदासजी टंडन, चीफ जस्टिस माननीय श्री जे. बी. गुप्ताजी,

नगराध्यक्ष श्रीमती कमला वर्मा, हायकोर्ट के वकील मित्तलजी, माननीय श्री मदनलालजी मित्तल आदि अनेक मंत्रियों, एम. एल. ए. तथा मान्यवरों ने माल्यार्पण द्वारा पूज्यश्री का स्वागत किया।

पुलिस विभाग के महानिदेशक, वरिष्ठ अधिकारियों तथा पुलिस के जवानों ने पूज्यश्री की सस्नेह सेवा की। पुलिस के सी. आई. डी. विभाग व दक्षता विभाग के जवानों ने विदाई के समय लंबी कतार लगाकर पूज्यश्री को फूलमाला पहनाकर बड़े भाव से स्वागत किया।

सत्संग सभा में गुप्तचर विभाग के अधिकारी जब श्रोता बनकर बैठ जाते हैं तब उनके तो दोनों काम हो जाते हैं। नौकरी द्वारा पेट की सेवा भी हो जाती है और सत्संग श्रवण का भी लाभ मिल जाता है। यह ड्यूटी मिलने के बाद कई पुलिस अधिकारी मंत्रदीक्षा लेकर पक्के साधक बन गये हैं। दिनांक : २१ सितंबर रात को लाखों-लाखों सजल नेत्रों ने भरे हृदय से, न चाहते हुए भी इन अलख के औलिया को विदाई दी।

लुधियाना : लुधियाना आश्रम में दिनांक : २३ से २८ सितंबर तक शक्तिपात साधना शिविर का आयोजन हुआ, जिसमें प्रथम दो दिन तक विद्यार्थियों के लिए शिविर का आयोजन किया गया था।

पंजाब में यह पहला अवसर था शिविर का। विद्यार्थी शिविर में हरियाणा एवं पंजाब के अनेकों विद्यार्थियों ने जीवन को तेजस्वी-ओजस्वी बनाने की कुँजियाँ प्राप्त कीं। कइयों का कहना था कि 'जीवन में यह पहला अवसर है।' स्कूल की छात्राओं ने आध्यात्मिक कव्वालियों से पू. बापूजी का स्वागत किया। नन्हीं-नन्हीं बालिकाओं की कव्वालियाँ एवं स्वागतगान का दृश्य देखते ही बनता था। ध्यान योग शिविर एवं विद्यार्थी शिविर में बिगुल बजते ही सब दौड़े चले आते थे सत्संग, ध्यान, कीर्तन के लिए।

पंजाब की सेवाधारी समितियाँ जुट गयी थीं इस जंगल में मंगल बनाने में। साढ़े चार सौ पुलिस कर्मचारी भी इस आयोजन में सेवा में लगे हुए थे। यातायात व साधकों की सुख-सुविधा के लिए पंजाब सरकार के ४५० पुलिस कर्मचारी व पुलिस अधीक्षक लगे हुए थे जिसमें से आधा दर्जन ब्लैक केट कमांडो पूज्य बापूजी की सेवा में लगाये गये थे। कितनी श्रद्धा और संतसेवा की तत्परता है पंजाबवासियों में!

आखिरी दिनों में तो यहाँ 'मिनी' कुंभ होते-होते मानो महाकुंभ का दृश्य हो गया! यहाँ की तमाम अखबारें पूज्यश्री के बड़े-बड़े फोटो एवं सत्संग मुखपृष्ठ पर देकर पुण्य अर्जित कर रही थीं।

पू. बापू के अन्य सत्संग कार्यक्रम

(१) देहरादून में : २ से ५ अक्तूबर '९७. सुबह ९-३० से ११-३०. शाम ४ से ६. परेड ग्राउन्ड. फोन : (०१३५) ६८३२०४, ६५३४८९, ६५०२७५, ६८५२२०. **(२) नई दिल्ली में तृतीय विश्वशांति सत्संग समारोह** ७ से १२ अक्तूबर '९७. सुबह १० से १२. शाम ४ से ६-३०. प्रथम तीन सत्संग श्री सुरेशानंदजी के द्वारा। स्थान : जवाहरलाल नेहरु स्टेडियम, नई दिल्ली। फोन : ५७६४१६१, ६४६६७८०, ४६३६४२९, ६९६२९७१, ६९२१४५४. **(३) आगरा आश्रम में शरदपूर्णिमा शिविर** : १६ से १९ अक्तूबर '९७. संत श्री आसारामजी आश्रम, सिकंदरा, आगरा। फोन : (०५६२) ३७१७७०, ३७२०१६. **(४) उझानी में ज्ञान भक्ति सत्संग महोत्सव** : २२ से २६ अक्तूबर '९७. सुबह ९-३० से ११-३०. शाम ४ से ६. प्रथम दो दिन श्री सुरेशानंदजी का सत्संग। इन्टर कालेज मैदान। फोन : ६२३२३, ६२४६०, ६२४३३.

भेंट रसीद बुक

अपने मित्रों, सगे-सम्बन्धी, पड़ौसी व अन्यों में ऋषियों का प्रसाद बाँटकर स्वयं व अन्यों को सुखी, स्वस्थ व सम्मानित जीवन जीने की राह पर अग्रसर करने के लिए कार्यालयों, वाचनालयों, धार्मिक स्थलों, अस्पतालों, सार्वजनिक स्थलों में भी 'ऋषि प्रसाद' बाँटकर ईश्वरीय दैवी कार्य में सहयोगी बनने के लिए, शादी, जन्मदिवस, त्यौहार, महत्त्वपूर्ण दिवस आदि पर 'ऋषि प्रसाद' की सदस्यता भेंटस्वरूप देकर स्वयं व अन्यों की आध्यात्मिक उन्नति में सहायक बनने के लिए भेंट रसीद बुकें बनायी गई हैं। ये रसीद बुकें आप 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय, अमदावाद से 'ऋषि प्रसाद' के नाम से डी. डी./मनीऑर्डर भेजकर प्राप्त कर सकते हैं।

आजीवन सदस्यता रसीद बुक : Rs.5000/- (10 सदस्य)
वार्षिक सदस्यता रसीद बुक : Rs.1200/- (25 सदस्य)
पता : 'ऋषि प्रसाद' कार्यालय, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद-३८०००५.

REGISTERED WITH R.N.I. UNDER NO. 48873/91 LICENSED TO POST W/O PRE-PAYMENT : AHMEDABAD PSO LICENCE NO. 207
Read. No. GAMC/1132 BOMBAY, BYCULLA PSO LICENCE NO. 1 Regd. No. MH/MNV-01

पूज्यश्री का स्वागत करते हुए पंजाब के मुख्यमंत्री, चण्डीगढ़ में।

मुख्यमंत्री श्री प्रकाशसिंह बादल : 'बाबा ! हम आपके पीछे पीछे...

दिल्ली राज्य के मुख्यमंत्री श्री साहिबसिंह वर्मा पूज्यश्री का भावभीना स्वागत करते हुए..
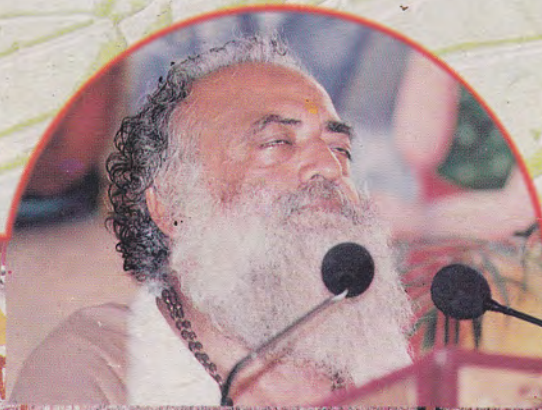
पूज्य बापू का भावभीना स्वागत करते हुए हरियाणा सरकार के शिक्षामंत्री श्री रामविलास शर्मा, एक दिन नहीं तीन-तीन दिन सुबह-शाम साथी मंत्रियों के साथ सत्संग का रसपान करते हुए।